RNI:UPHIN/2016/46009
RNP/SHN/18/2022-24

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ
ब्रह्मज्ञान ही अमृत है।
सरसावा

तारतम मंजरी

वर्ष ९ अंक ५ मई २०२४ बुद्धजी शाका ३४६ विक्रम संवत २०८१ पृष्ठ संख्या ३२

।। परमधाम ।।

।। चितवनी ।।

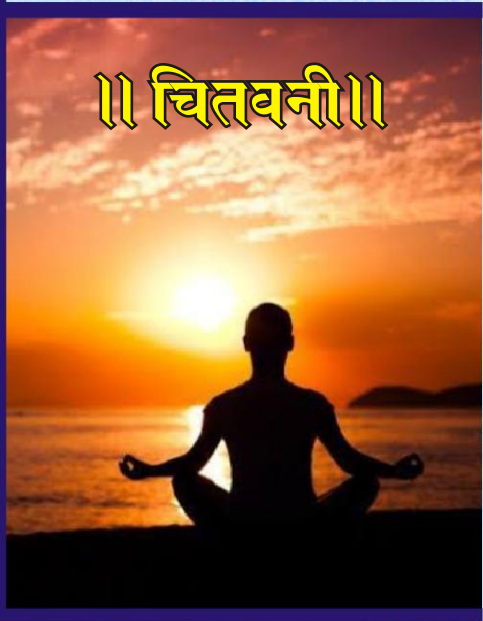

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ

नकुड़ रोड़, सरसावा, जिला सहारनपुर–247232 (उ.प्र.)

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ की स्थापना वर्ष 2005 में सरसावा, जिला सहारनपुर (उत्तर प्रदेश) में श्री राजन स्वामी जी द्वारा की गई थी। इसका प्रमुख उद्देश्य ज्ञान, शिक्षा, उच्च आदर्श, पावन चरित्र व भारतीय संस्कृति का समाज में प्रचार करना तथा वैज्ञानिक सिद्धान्तों पर आधारित आध्यात्मिक मूल्यों द्वारा मानव को महामानव बनाना है। इसके साथ ही यह संस्था श्री प्राणनाथ जी की अलौकिक वाणी का प्रकाश फैलाकर सम्पूर्ण विश्व को एक सच्चिदानंद परब्रह्म के प्रेममयी आंगन में भाव-विभोर करने के लिए कृत संकल्पित है। इसके लिए उच्च माध्यमिक शिक्षा प्रदान कर ऐसे विद्वानों को तैयार किया जा रहा है जो संसार को धर्म के वास्तविक स्वरूप का बोध करा सकें और सच्चिदानंद परब्रह्म के साक्षत्कार का यर्थाथ मार्ग दर्शा सकें।

ज्ञानपीठ में उपलब्ध सुविधाओं में मुख्यतः शिक्षा कक्ष, पुस्तकालय व वाचनालय, ध्यान कक्ष, प्रवचन कक्ष, कम्प्यूटर कक्ष, दृश्य-श्रव्य स्टूडियो, छात्रावास, भोजनालय, मुद्रणालय, गौशाला इत्यादि सम्मिलित है।

कालान्तर में ज्ञानपीठ की पन्ना (मध्य प्रदेश), बड़ोदरा (गुजरात), दाहोद (गुजरात) तथा सिक्किम में शाखाएं श्री प्राणनाथ ज्ञान केन्द्र के नाम से स्थापित की गई हैं जो समाज में ब्रह्मज्ञान का आध्यत्मिक शिक्षा का प्रचार-प्रसार करने में निरन्तर कार्य कर रही हैं।

: सम्पर्क करें :

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ

नकुड़ रोड़, सरसावा, जिला सहारनपुर-247232 (उ.प्र.)

E-mail : shriprannathgyanpeeth@gmail.com

Website : www.spjin.org • **WhatsApp:** +91 +91 75338 76060

प्रेरणा स्रोत
राजन स्वामी

●

मुख्य संपादक
आचार्य सुभाष
9725389547

●

संपादक
कृष्ण कुमार कालड़ा
9414846972

● ● ●

लेखों में प्रकट किए गए विचार लेखकों के व्यक्तिगत विचार हैं। इनके प्रति प्रकाशक/संपादक उत्तरदायी नहीं है। किसी भी विवाद की स्थिति में न्याय क्षेत्र सहारनपुर होगा।

● ● ●

सदस्यता शुल्क

वार्षिक रु. 200/-
आजीवन (10 वर्ष) रु. 1800/-

तारतम मंजरी

वर्ष 9 • अंक 5 • मई 2024 • बुद्धजी शाका 346
विक्रम संवत् 2081

इस अंक में

	सम्पादकीय	3
1.	श्री राज जी के सात स्वरूप कौनसे हैं? – राजन स्वामी	7
2.	ये चरण पिया के मेहर भरे – अनिल श्रीवास्तव	9
3.	ए हक बातन की बारीकियां – नरेंद्र पटेल	17
4.	जयराम भाई कंसारा के वृतांत से शिक्षा – नीना भुच्चर	20
5.	क्या तारतम जोर से बोलना गुनाह है? – पारेन पटेल	23
6.	पुनर्जन्म सिद्धान्त की वैदिक अवधारणा – डॉ गौरव शर्मा	25
7.	प्रार्थना क्यों करें? कैसे करें? – डॉ. रमेश के. अरोड़ा	30

प्रकाशन कार्यालय
श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ
नकुड़ रोड़, सरसावा 247232, जिला सहारनपुर (उ. प्र.)
फोन : +91 70881 20381
ई-मेल : tartammanjari@gmail.com

किरंतन

राग श्री

दुख रे प्यारो मेरे प्रान को ।
सो मैं छोड़यो क्यों कर जाए, जो मैं लियो है बुलाए ।। टेक ।।१।।
इन अवसर दुख पाइए, और कहा चाहियत है तोहे ।
दुख बिना चरन कमल को, सखी कबहूं न मिलिया कोए ।।२।।
जिन सुख पिउजी ना मिले, सो सुख देऊं रे जलाए ।
जिन दुख मेरा पिउ मिले, मैं सो दुख लेऊं बुलाए ।।३।।
दुख तो हमारो आहार है, औरन को दुख खाए ।
दुख के भागे सब फिरें, कोई विरला साध निबाहे ।।४।।
दुख को निबाहू ना मिले, और सुख को तो सब ब्रह्मांड ।
इन झूठे दुख थें भाग के, खोवत सुख अखण्ड ।।५।।
दुख की प्यारी प्यारी पिउ की, तुम पूछो वेद पुरान ।
ए दुख मोही को भला, जो देत हैं अपनी जान ।।६।।
ता कारन दुख देत हैं, दुख बिना नींद न जाए ।
जिन अवसर मेरा पिउ मिले, सो अवसर नींद गमाए ।।७।।
नींद बुरी या भरम की, भरम तो भई आड़ी पाल ।
वह दुख देत जलाए के, जो आड़ी भई अपने लाल ।।८।।
नींद निगोड़ी ना उड़ी, जो गई जीव को खाए ।
रात दिन अगनी जले, तब जाए नींद उड़ाए ।।९।।
इन सुपने के दुख से जिन डरो, दुख बदले सत सुख ।
अपने मासूक सों नेहड़ा, तोको देयगो बनाए के दुख ।।१०।।
ता सुख को कहा कीजिए, जो देखलावे धरम राए ।
मैं वह दुख मांगो पिउपें, पिउ सों पल पल रंग चढ़ाए ।।११।।
दुख सब सुपनों हो गयो, अखण्ड सुख भोर भयो ।
महामत खेले अपने लाल सों, जो अछरातीत क्यों।।१२।।

(प्रकरण १६)

सम्पादकीय

परमात्मा की अनुभूति के लिए हृदय की पवित्रता आवश्यक है

कुछ दिन पूर्व एक विदूषी सुंदरसाथ मुझसे मिली और बोली - 'मुझे ब्रह्म ज्ञान चाहिए।' मुझे लगा कि उन्हें कोई गलतफहमी हो गई है क्योंकि मैं ठहरा अल्पज्ञ, किसी को क्या दे सकता हूं - वो भी ब्रह्म ज्ञान। बात को समाप्त करने के उद्देश्य से मैंने भी कह दिया - 'इसके लिए सबसे पहले हमें अपने हृदय को निर्विकार बनाना होगा ताकि यह उस ज्ञान को ग्रहण करने की पात्रता हासिल सके।' क्योंकि जैसे ऊसर भूमि में बीज बोने पर अंकुरित नहीं होता, उसी प्रकार पात्रता नहीं होने पर ब्रह्म ज्ञान भी हृदय में नहीं उतरता। इसी संदर्भ में मुझे वाणी की एक चौपाई अक्सर याद आती है-

एहेना पात्र हसे ए जोग, आ लीलानो ते लेसे भोग।
केसरी दूध न रहे रज मात्र, उत्तम कनक विना जेम पात्र।।(प्रकास गुजराती, ३३/१५)

अर्थात् जिस प्रकार शुद्ध स्वर्ण पात्र के बिना सिंहनी का अंश मात्र भी दूध किसी अन्य पात्र (बर्तन) में नहीं ठहर सकता, उसी प्रकार इस लीला (जिसमें यह ब्रह्मवाणी अवतरित हुई है) का रसास्वादन करने के पात्र जो ब्रह्ममुनि होंगे, एकमात्र वे ही इसकी अनुभूति करेंगे।

'अर्थात्...?' उस महिला का प्रश्न था।

मुझे समझ नहीं आया कि अब मैं क्या उत्तर दूं। कुछ रूककर मैनें कहा- 'जी, मेरा आशय हृदय को निर्मल और पवित्र बनाने से है जिसमें झूठ, छल, चतुराई आदि विकार न हों।'

यद्यपि, जैसाकि 'सिनगार' ग्रंथ की निम्न चौपाई से अभिप्रेत है, धनी जी के दिल की सब बारीकियां, अर्थात् तारतम वाणी के रहस्य, जब वे खुद देना चाहे, या हमें समझाना चाहें, तभी समझ में आ सकती हैं। इन्हें किसी अन्य से सीखने, सिखाने या सोहोबत से प्राप्त नहीं किया जा सकता। यह केवल उनकी मेहर से ही संभव है-

ए हक बातन की बारीकियां, सो हक के दिए आवत।
ना सीखे सिखाए ना सोहोबतें, हक मेहेरें पावत।।(४/१२)

तथापि मैं यहां यह स्पष्ट करना चाहूंगा कि यहां आत्मा या उसके हृदय को निर्मल एवं पवित्र बनाने की बात नहीं है क्योंकि आत्मा, परात्म का प्रतिबिंब है, अतः उसके विकारग्रस्त होने का प्रश्न ही नहीं उठता। वह तो जीव पर बैठकर द्रष्टा के रूप में इस खेल को देख रही है। दोनों का हृदय अलग है। हां, जन्म-जन्मान्तरों से जीव का हृदय मायावी विकारों से अवश्य ग्रसित है, इसलिये उसके ही निर्मल और पवित्र होने की आवश्यकता है। इसलिए, 'किरंतन' ग्रंथ में कहा गया है-

अंदर नाहीं निरमल, फेर फेर नहावे बाहेर।
कर देखाई कोट बेर, तोहे ना मिलो करतार।।(किरंतन १३२/१)

अर्थात्, हे मेरी आत्मा! यदि तुम्हारे जीव का हृदय निर्मल नहीं है तो शरीर को बार-बार जल से नहलाने से कोई लाभ नहीं है। शरीर को स्वच्छ रखकर यदि तू दिखावे वाली कर्मकाण्ड की भक्ति करोड़ों बार भी करोगी तो भी प्रियतम परब्रह्म से मिलन नहीं होगा। इसी संदर्भ में इसी प्रकरण की आगे की कुछ चौपाईयां भी विचारणीय हैं-

कोट करो बंदगी, बाहेर हो निरमल।
तोलों ना पिउ पाइए, जोलों ना साधे दिल।।(किरंतन, १३२/२)

अर्थात्, भले ही तुम करोड़ों बार कर्मकाण्ड की भक्ति (बन्दगी) करो तथा जल आदि से अपने बाह्य शरीर को शुद्ध भी रखो, लेकिन जब तक हृदय निर्मल नहीं होता, तब तक प्रियतम से मिलन (दीदार) नहीं हो सकेगा।

जैसा बाहेर होत है, जो होए ऐसा दिल।
तो अधखिन पिउ न्यारा नहीं, माहें रहे हिल मिल।।(किरंतन, १३२/४)

अर्थात्, जिस तरह से तुमने अपने बाह्य शरीर को निर्मल कर लिया है, उसी तरह यदि अपने हृदय को भी स्वच्छ कर लो तो आधे क्षण के लिये भी प्रियतम तुमसे दूर नहीं है। तू अपने प्राणवल्लभ को पाकर उनसे एकाकार हो जायेगी।

वस्तुतः हमारे धनी हमसे रंचमात्र भी अलग नहीं है। जैसाकि वाणी कहती है- 'हक नजदीक सेहरग से' अर्थात् वे तो हमारी सेहरग अर्थात् प्राणनली से भी नजदीक है लेकिन हमें इसका बोध नहीं है क्योंकि हमनें स्वयं और उनके बीच माया का पर्दा कर लिया है और अपने को मायावी विकारों से ग्रसित कर लिया है। इसीलिए, 'किरंतन' ग्रंथ में आगे कहा गया है-

तूं आपे न्यारी होत है, पिउ नहीं तुझ से दूर।
परदा तूं ही करत है, अंतर न आड़े नूर।।(किरंतन, १३२/५)

'किरंतन' ग्रंथ के ही एक अन्य प्रकरण में तो एक कदम आगे बढ़कर (शुष्क) ज्ञान को भी इसके लिए उत्तरदायी माना गया है क्योंकि इससे व्यक्ति में अहंकार आ जाता है। इसीलिए, यह कहा गया है-

इलम चातुरी खूबी अंग की, मोहे एही पट लिख्या अंकूर।
एही न देवे देखने, मेरे दुलहे के मुख का नूर।।(६२/४)

अर्थात्, ज्ञान के क्षेत्र में चतुराई हो जाना तो मनुष्य का स्वभाव है। मेरे (महामति जी) भाग्य में भी इसी चतुराई का पर्दा है। यह चतुराई ही मुझे अपने प्रियतम के मुख की शोभा का दीदार नहीं करने देती।

यहां यह स्पष्ट करना उचित होगा कि श्री महामति जी का यह कथन सुंदरसाथ के सिखापन के लिए है। जिस तन में स्वयं अक्षरातीत परब्रह्म विराजमान होकर ब्रह्म वाणी का अवतरण कर रहे हों, उसमें ज्ञान की चतुराई होने का

प्रश्न ही नहीं है। दरअसल, इल्म (ज्ञान) आने के पश्चात् हमारे अंदर न तो अपने धनी के प्रति ईमान (विश्वास) आता है और न ही इश्क(प्रेम), बल्कि हम बुद्धि के बल से वास्तविक सत्य को खींच-तानकर प्रस्तुत करते हैं और यही ज्ञान की चतुराई है।

इसी प्रकार, जहां तक 'छल' शब्द का अभिप्राय है, सामान्य बोलचाल की भाषा में इसका आशय ऐसे कृत्य से है जिससे मन, वाणी, कर्म से किसी का दिल दुखे अथवा अपने स्वार्थ एवं कामनाओं की पूर्ति के लिए किसी से उसका कुछ छीना जाय। किंतु, वाणी में इस संपूर्ण खेल को ही छल-रुप कहा गया है जैसाकि 'सनंध' ग्रंथ की निम्न चौपाई से अभिप्रेत है-

तुम आइयां छल देखने, भिल गैयां माहे छल।
छल को छल न लागहीं, ओ लेहेरी ओ जल।।(१२/११)

इसलिए, सुन्दरसाथ को इन विकृतियों से बचने के लिये ऐसा कहा गया है।

हृदय की 'पवित्रता' को समझने के लिए हमें 'स्वच्छता', 'शुद्धता' और 'पवित्रता' में अंतर समझना होगा। स्वच्छता (cleanliness) का सम्बंध शरीर से है और शुद्धता (purity) का सम्बन्ध अंतःकरण से है। ये दोनों जीव के भाग हैं। किंतु पवित्रता (holiness) का सम्बन्ध आत्मा से होता है। उल्लेखनीय है कि जब श्री मिहिर राज को लगता है कि सद्गुरु महाराज की तरह उन्हें भी श्री राज जी के दर्शन क्यों नहीं होते तो वे अपने अन्तःकरण की पवित्रता की अनेक प्रकार से परख करते हैं जैसाकि बीतक साहेब के इस कथन से स्पष्ट है- **'परखा ऐसी करें मन की, खीजे बहुत बचन'(१४/२३)।**

यहां तक कि वे माया के स्वरूप जानकर अपने पत्नी फूलबाई जी के सारे आभूषण सद्गुरु के चरणों में अर्पित कर देते हैं।

इसी प्रकार, अब्बासी बन्दर में भैरव सेठ ने जब बुराई को छोड़ा तो सच्चे हृदय से छोड़ा। परिणामस्वरूप तीसरे दिन ही उसकी सुरता मूल मिलावे में पहुँच गयी और उसने युगल-स्वरूप का प्रत्यक्ष अनुभव कर लिया।

स्मरणीय है कि धामधनी की कृपा पल-पल सब पर है, किन्तु जो हृदय की आन्तरिक सच्चाई से अपने अवगुणों का परित्याग करता है, निश्चय ही उनको अध्यात्म जगत में सफलता जल्दी मिलती है। किन्तु जो आध्यात्मिक क्षेत्र में उतरकर भी अपने अवगुणों को जबरन दबाये रखता है और बाह्य रूप से पवित्रता का आवरण ओढ़े रहता है, वह अपने पाँव पर कुल्हाड़ी ही मारता है। इस प्रकार के आडम्बर-पूर्ण जीवन से कोई लाभ नहीं होता। इसलिए, वाणी कहती है-

सब पर मेहेर मेहेबूब की, पर पावे करनी माफक।(किरंतन ७८/१३)

यदि भैरव सेठ को आत्मिक दृष्टि से तीसरे दिन दर्शन हो सकते हैं, तो गृह का त्याग कर संन्यास भेष में रहने वालों को सारे जीवन में क्यों नहीं दर्शन होता? ऐसा इसलिये है क्योंकि वे अपने अवगुणों का शुद्ध हृदय से परित्याग नहीं करते और समर्पण की भावना से कोसों दूर रहते हैं।

तारतम ज्ञान के प्रकाश में यह पूर्णतः स्पष्ट हो गया है कि आत्मा और परमात्मा के बीच किसी भी प्रकार का भेद नहीं है। आवश्यकता है अपने जीव को आत्म भाव में लाने की तथा अपनी आत्मिक दृष्टि को इस संसार से हटाकर युगल-स्वरूप की ओर लगाने की। फिर देखिए, हमारे धनी हमारे समक्ष होंगे।

अंत में, सार रूप से यह कहा जा सकता है कि ज्ञान से परिपक्व होकर विरह में तड़पने तथा युगल-स्वरूप व अपनी परात्म की अनुभूति के पश्चात् ही परमधाम के सुखों की याद आती है। शुष्क हृदय से वाणी पढ़ लेने मात्र से इस अवस्था को नहीं पाया जा सकता। न ही केवल मात्र शब्द ज्ञान ग्रहण कर उपदेश देने से। यह उन लोगों के लिए सिखापन भी है जो इसी में स्वयं को कृतार्थ मानते है भले ही उनके इस प्रयास का दूसरों पर कोई सकारात्मक प्रभाव पड़े या न पड़े। इसलिए, उन्हें अपने आत्म-कल्याण के बारे में सोचना चाहिए। वाणी भी कहती है-

रे रूह करे ना कछू अपनी, के तूं उरझी उमत माहें।
उमर गई गुन सिफत में, तोहे अजूं इस्क आया नाहें।।(खिलवत, १०/१)

- कृष्ण कुमार कालड़ा

SPJINGPT का विमोचन

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ की ओर से पिछले महीने होली के अवसर पर SPJINGPT का विमोचन किया गया जिसके माध्यम से सुंदरसाथ विभिन्न आध्यात्मिक विषयों, तथा आत्मा–परमात्मा, सतगुरु, मानव जीवन का परम लक्ष्य, ध्यान–समाधि, नैतिक मूल्यों आदि में अपना ज्ञान बढ़ा सकते हैं। इस चैनल पर नए वीडियो नियमित रूप से अपलोड होते रहेंगे।

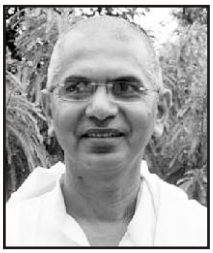

श्री राज जी के सात स्वरूप कौनसे हैं ?

राजन स्वामी

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा

श्री बीतक साहब में एक चौपाई आती है-

जो प्रदक्षिणा निजधाम की, सातों सरूप श्री राज।
सो सारे परना मिने, वास्ते सैंयन के सुख काज।।(१७/ ६६)

अर्थात् ब्रह्मसृष्टियों को निजधाम का शाश्वत् आनन्द देने के लिये परमधाम की सातों परिक्रमा तथा श्री राज जी के सातों स्वरूपों का अवतरण श्री ५ पद्मावतीपुरी धाम पन्ना जी में हुआ। श्री राज जी के सात स्वरूपों के विषय में हमारे समाज के विद्वानों में कुछ मतभेद हैं, जिनकी समीक्षा यहां प्रस्तुत है-

१. कुछ के मतानुसार सात ग्रन्थों - खुलासा, खिलवत, परिकरमा, सागर, सिनगार, सिन्धी तथा मारफत सागर - का अवतरण श्री पन्ना जी में हुआ है। इस प्रकार, ये सातों ही श्री राज जी के सात स्वरूप हैं।

बड़ा कयामतनामा चित्रकूट में अवश्य उतरा है, जिसमें छत्रसाल जी की छाप है किंतु छोटा कयामतनामा पन्ना जी में उतरा है जिसमें महामति जी की छाप है। इसी प्रकार तीसरा कयामतनामा भी पन्ना जी में ही उतरा है। कयामतनामा को जोड़ने पर आठ ग्रन्थ हो जाते हैं।

प्रश्न यह है कि जब सम्पूर्ण वाणी ही श्री राज जी का वाङ्गमय कलेवर है। ऐसी स्थिति में केवल सात ग्रन्थों को ही श्री राज जी का स्वरूप क्यों माना जाय, १४ ग्रन्थों को क्यों नहीं?

२. कुछ विद्वानों के मतानुसार परमधाम की सातों परिक्रमा ही श्री राज जी की हकीकत का स्वरूप है, इसलिये इन्हें ही सात स्वरूप मानना चाहिये। इसके सम्बन्ध में यही कहा जा सकता है कि 'सातों सरूप श्री राज' का कथन दूसरे चरण में हुआ है। पहले चरण का प्रसंग अलग है और दूसरे का अलग। जहां पहले चरण में 'परिकरमा' ग्रन्थ का प्रसंग है वहीं दूसरे चरण में श्री राज जी के स्वरूप का।

३. कुछ सुन्दरसाथ 'सिनगार' ग्रंथ की निम्न चौपाई

'सातों सरूप अखण्ड, मैं बरनन किए सिर ले।
दो रास पांच अर्स अजीम, बोझ दिया न सिर सरूपों के।।'(३/५२)

को यहाँ उद्धृत करते हैं, किन्तु प्रश्न यह उठता है कि रास के दोनों स्वरूप तो हब्से में उतरे हैं जबकि यहां पन्ना जी में उतरने वाले स्वरूपों का प्रसंग चल रहा है। इसलिये यह मानना उचित नहीं है।

३. तारतम वाणी के शब्दों में, स्वरूप वह है जिसमें युगल स्वरूप के नख से शिख तक की शोभा का वर्णन किया जाय। जैसे प्रातःकाल के स्वरूप 'श्री राज श्री ठकुरानी जी प्रथम भोम में' में युगल स्वरूप की शोभा अर्थात् श्रृंगार का वर्णन किया गया है। इस प्रकार, एक बार नख से शिख तक के वस्त्राभूषणों से युक्त शोभा (श्रृंगार) के वर्णन को एक स्वरूप कहते हैं। श्री राज जी का सात बार यदि श्रृंगार वर्णित किया जाय, तो उसे सात स्वरूप कहा जाना चाहिये। जैसे सागर ग्रन्थ में तीन बार श्री राज जी के श्रृंगार का वर्णन किया गया है।

'सिनगार' ग्रन्थ के चार मंगलाचरण है और चार बार नख से शिख तक श्री राज जी की शोभा का वर्णन किया गया है। इस ग्रन्थ का पहला प्रकरण ही मंगलाचरण से शुरू होता है। इस ग्रन्थ में चारों मंगलाचरणों के साथ चारों स्वरूपों का वर्णन इस प्रकार वर्णित है-

प्रकरण १ मंगलाचरण (पहला)

प्रकरण ३ चरन

प्रकरण ५ चरन को अंग

प्रकरण ६ चरन हक मासूक के उपली शोभा

प्रकरण ७ चरन निसबत का प्रकरण अंदरतांई

प्रकरण ८ कदम परिक्रमा निसबत

प्रकरण ९ अर्स अन्दर निसबत चरण

प्रकरण १० श्री राज जी की इजार

प्रकरण ११ खुले अंग छाती सिनगार छवि छाती

प्रकरण १२ मंगलाचरण (दूसरा)

प्रकरण १२ खभे कण्ठ मुखारविन्द शोभा समूह

प्रकरण १३ हक मासूक के श्रवण अंग

प्रकरण १४ हक मासूक के नेत्र अंग

प्रकरण १५ हक मेहेबूब की नासिका

प्रकरण १६ हक मासूक की जुबान की सिफत

प्रकरण १७ हक मासूक के वस्तर

प्रकरण १८ हक मेहेबूब के भूखन

प्रकरण १९ जोबन जोस मुख बीड़ी छवि

प्रकरण २० मंगलाचरण (तीसरा)

प्रकरण २० नख से शिख तक का वर्णन

प्रकरण २१ मंगलाचरण (चौथा)

प्रकरण २१ मुखकमल मुकुट छवि

प्रकरण २२ श्रृंगार कलस

(श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा द्वारा प्रकाशित लेखक कृत 'बीतक टीका' से उद्धृत)

ये चरण पिया के मेहर भरे

अनिल श्रीवास्तव

चंडीगढ़

आज धनी के हुक्म से दिल में धनी के दिल को देखने का भाव आया जो कि नूर का, वहदत का और मार्फत का स्वरूप है, सागर का स्वरूप है जिसके अंदर अनंत सागर लहराते हैं। राज जी का दिल एक वहदत है यानि एक है और उससे जो लहरें प्रकट होती है उन्हें वहदत कहते हैं। अर्श की हकीकत का पूर्ण स्वरूप ही वहदत का स्वरूप है।

पच्चीस पक्ष, जल, तेज, वायु, बाग, बगीचा, बारह हजार ब्रह्मसृष्टियाँ, पशु, पक्षी, दरख्त यानी हर स्वरूप राज जी के दिल रूपी सागर से बहती हुई लहरों का स्वरूप है, वहदत की वहदत हैं। वहदत का मूल राज जी का दिल है जो नूर भी है और वही दिल वहदत की मार्फ़त है। जो भी दिल से प्रकट होता है वो दिखता है और अर्श की हक़ीक़त कहलाता है। नदी, ताल, बाग, जानवर आदि सब अर्श की हक़ीक़त के स्वरूप हैं और इन सबके बीच में जो प्रेम की डोर से बंधे हुए संबंध है वही वहदत के स्वरूप हैं। निसबत, खिलवत, वहदत, जेती अर्स की हक़ीक़त तो जितना भी हक़ीक़त का स्वरूप है सब धनी के दिल की मार्फ़त की प्रकट लहरों का स्वरूप है।

लहर सागर से अलग नहीं हो सकती, अगर वो अलग हो गई तो वह लहर नहीं है। इन लहरों का निवास सागर में है तो वहदत का संबंध यानी निसबत वहदत से है। परमधाम के पच्चीस पक्ष जो लहरों के समान वहदत के स्वरूप हैं उनका मूल संबंध धनी के दिल से है। उस दिल में यानी सागर के दिल में अपनी लहरों के लिए जितना लाड़ है वो हक़ीक़त में मेहर का स्वरूप हो जाता है। अगर इसे अपने दिल में महसूस करो तो वो लाड़ है और अगर तन पर महसूस करो तो वो मेहर है।

कहे महामत तुम पर मोमिनों, दम दम जो बरतत।
सो सब इस्क हक का, पल पल मेहेर करत। (खिलवत 12/100)

धनी का दिल इश्क़ का सागर भी है और वहाँ से जितनी भी लहरें बहती है वो आत्माओं को शीतल स्पर्श का सुख देती हैं तो वो मेहर का सुख होता है। आज हम सब धनी के दिल को देखेंगे भी और उसके स्पर्श के सुख का एहसास भी करेंगे ,उसमें अपना मंदिर और कोठड़ी भी देखेंगे।उनके लाड़ की अनुभूति भी करेंगे तथा लाड़ का एहसास भी करेंगे।

फेर फेर चरन को निरखिए, रूह को एही लागी रट।
हक कदम हिरदे आए, तब खुल गए अन्तर पट।।(सिनगार 6/1)

धनी बार बार यही कहते हैं कि अपने अंतर के पट को खोलो ताकि धनी का दिल रूह का दिल और धाम की अनंत रूहों का दिल अरस परस हो जाये और उनमें कोई भी पर्दा ना रहे। हक़ीक़त और मार्फ़त का स्वरूप रूह के दिल में तभी आएगा जब धनी के चरण कमल हमारे हस्त कमल पर विराजेंगे और हम बार बार उन पर अपना माथा रखें।

गुन केते कहूं इन चरन के, आवें न माहें सुमार।
याही वास्ते खेल देखाइया, रूह देखसी देखनहार।।(सिनगार 6/2)

केवल चरण को अलग से नहीं देखना है क्योंकि धनी जो वहदत है नूर का स्वरूप है और वो नूर के चरण है। हमें विचारणा होगा कि धनी के चरण कमल हमारे दिल में कैसे आ सकते हैं क्योंकि चरण कमल दिल में आये बिना धनी का दिल नहीं देख सकते। अर्श की हक़ीक़त को अपने दिल में धारण किए बिना अर्श का दिल यानी धनी का दिल जो नूर है वहदत है वो हमारे दिल में नहीं आ सकता। धनी के तन को कितना भी देखो लेकिन जब तक दिल के अंदर आनंद की अनुभूति ना हो तब तक धनी का दिल हमारे दिल में उतरता नहीं है । जब तक दोनों दिल मिलते नहीं तब तक हम केवल लहर ही रह जाते हैं सागर से भेंट नहीं होती। इन चरणों की खूबियाँ क्या है? चरण धनी के दिल को देखने का पहला पादान है अगर चरण छूट गये तो दिल दूर है तथा दिल को पाये बिना आठ सागरों में झीला नहीं जा सकता।सिंगार ग्रंथ आठ सागर का स्वरूप है। मूल मिलावा राज जी का दिल है उस दिल में आठों सागर लहराते हैं जिनमें झिलना ही इस संसार में रूहों का लक्ष्य है।

नूर सागर, नीर सागर, क्षीर सागर, दधि सागर, घृत सागर, मधु सागर, रस सागर और सर्वरस सागर यह आठ सागर हैं जो धनी के दिल में विराजते हैं। इन आठ सागरों के रंगों को अगर हम देखेंगे तो सब नूर से भरे हुए हैं और एक एक लहर सागर का स्वरूप है ।हर सागर में अनंत लहरें है, और हर लहर अपने आप में संपूर्ण सागर है । अनंत लहरों के स्वरूप अनंत सागर है ,एक सागर के अंदर अनंत सागर हैं, इस तरह से आठ सागरों का स्वरूप अनंत सागरों का स्वरूप है जो हमारे प्राणप्रीतम अक्षरातीत के दिल में अपने अनंत गुणों के साथ विराजते हैं।

जैसे प्रेम है जो इश्क़ का स्वरूप है, आनंद है जो इश्क़ का रस है, एकत्व है, सौंदर्य का स्वरूप है आभा कांति चमक छटा भी है, उमंग, उत्साह, उल्लास, ऊर्जा, प्रफुल्लता, माधुर्यता, शीतलता, चैतन्यता, कोमलता, सुगन्ध, संगीत, नृत्य, कृपा ऐसे अनंत सुखदाई गुण धनी के दिल से लहरों के रूप में वहदत के हर स्वरूप में आ विराजते हैं। जब यहाँ आई हुई आत्माएँ अपने मूल तन का दीदार कर लेती हैं तो वो जान जाती है कि उनमें और इनमें कोई भेद नहीं है। यह सब चरणों के गुण है और चरण पकड़ कर ही धनी के दिल में उतरा जा सकता है।

गुन केते कहूं इन चरन के, आवें न माहें सुमार।

इन चरणों के गुण हैं इन चरणों के द्वारा दिल को पाना और यह गुण अनगिनत हैं। परमधाम में हमनें सब कुछ देखा, धनी का नूर तन देखा, परमधाम के पच्चीस पक्षों को देखा, उनको बोलते हुए भी देखा। वहाँ लीला तो बेशुमार है जो प्रेममयी है जो सबके दिल में आनंद की लहरें प्रवेश करवा देती हैं, लेकिन वहाँ धनी ने अपना दिल नहीं दिखाया था।

धनी ने अपने तन के नख से शिख तक के हर अंग को जामे के साथ और बिना जामे के भी दिखाया था, सब कुछ दिखाया, हमारे साथ रंगपरवाली की लीला भी की, जल क्रीड़ा भी की, पशु पक्षियों पर स्वारी करके जीमीं से आसमान तक उड़ान भरवा कर हमें आसमान तक भी पहुँचाया, यमुना जी के जल की लहरें जब आसमान तक जाती तो जल क्रीड़ा करते हुए उस जल की लहरें हमें अपने अंदर बिठा कर आसमान तक पहुँचा देती है। पश्चिम की चौगान में जब पशु पक्षी आसमान तक उड़ान भरते हैं तो हमें भी अपनी मख़मली पीठ पर बैठाकर आसमान में ले जाते हैं।

जीमीं से आसमान के बीच नूर ही नूर की तरंगें लहरें बह रही हैं। धनी ने अर्श की हक़ीक़त के सब रूप दिखाए लेकिन अपना दिल नहीं दिखाया। धनी ने अपना दिल ना परमधाम में दिखाया और ना ही बृज में दिखाया।यहाँ अपने आवेश से धनी ने श्री कृष्ण जी का तन धारण किया, सब लीलाएँ की लेकिन अपने दिल की रंगत और कोमलता नहीं दिखाई, दिल का स्वरूप कैसा है वो नहीं दिखाया। जब रास में गये वहाँ भी नहीं दिखाया। तन से लीलाएँ करते हुए सारा आनंद दिया लेकिन दिल नहीं दिखाया। फिर जब धनी अपनी मेहर से फिर सब को धाम में ले गये वहाँ भी अनंत लीला हुई लेकिन अपना दिल नहीं दिखाया ।

एक पातसाही अर्स की, और वहदत का इस्क।
सो देखलावने रूहन को, पेहेले दिल में लिया हक।।(खिलवत 16/17)

जो बात करनी है हकें, सो पेहेले लेवें माहें दिल।
पीछे सब में पसरे, जो वहदत में असल।।(खिलवत 6/42)

धनी ने अपने दिल में बात ले ली कि इस जागनी के ब्रह्मांड में रूहों को अपना दिल दिखाना है तो धनी अपने हुक्म से हम सब को अपना दिल दिखाने के लिए यहाँ ले आए और यही वहदत का स्वरूप है। अर्श की पातशाही मतलब धनी के इलावा कोई दूजा नहीं है। आज वहदत का इश्क़ भी देखेंगे जो दिखाने की बात धनी ने अपने दिल में ली है। याही वास्ते खेल देखाइया तो अब आत्माओं को धनी के दिल का दीदार भी करना है और उससे बहती हुई इश्क़ की लहरों को अपने दिल में धारण भी करना है।

हक हादी रूहें निसबत, ए अर्स की वहदत।
जो रूह होवे अर्स की, सो क्यों छोड़ें ए न्यामत।।(सिनगार 6/8)

धनी के चरण कमलों को पकड़ कर रखिए तो उनके दिल की आकर्षण शक्ति स्वयं ही हमें अपने दिल में बिठा लेती है। युगल स्वरूप, श्यामा जी, ब्रह्मसृष्टियाँ, अक्षर ब्रह्म, महालक्ष्मी और धाम के पच्चीस पक्ष इन सब की हक हादी से निसबत है यानी रूहों की निसबत हक़ हादी से है, एक-एक रूह से शाश्वत सम्बन्ध है और यही अर्श की वहदत है। धनी के दिल रूपी नूर सागर से लहरें प्रकट होती हैं जो वहदत का स्वरूप हैं और उस हर लहर का सम्बन्ध दूसरी लहर से है, दोनों लहरें आपस में भी अरस परस है क्योंकि सब उस सागर से, दिल से ही प्रकट होती हैं जो वहदत है। हक हादी उस सागर का ही स्वरूप है। हादी धाम धनी का दिल है ,धाम धनी हक हैं और रूहें परमधाम का स्वरूप है यानी धाम का हर स्वरूप रूह है। राज़ जी के हुक्म ने अपनी वाणी से हमारे दिलों को इस तरह से पेंट कर दिया है कि अब वो पेंट छूटता नहीं है। उसमें इतनी चमक है आभा है कि हम हमेशा उस चमक से अरस परस रहती है।

हादी यानी श्यामा जी जो धनी के दिल का स्वरूप हैं, रूहें धनी के दिल के अंदर विराजमान हैं यानी श्यामा जी के अंदर विराजती हैं। रूहें श्यामा जी के दिल में और श्यामा जी राज जी के दिल में यह तीनों मिलकर एक वहदत हो जाते हैं, मार्फ़त स्वरूप हो जाते हैं यही अर्श की वहदत है। युगल स्वरूप यानी तन और दिल तथा परमधाम के पच्चीस पक्ष, ब्रह्मसृष्टियों के संग सबकी अखण्ड निसबत है।यही अर्श की वहदत है।

जो कछुए चीज अर्स में, सो सब वहदत माहें।
जरा एक बिना वहदत, सो तो कछुए नाहें।।(सागर 1/43)

जब हम चितवन में बैठते हैं तो हमें ऐसा प्रतीत होना चाहिए कि हम धनी के चरण कमल को पकड़ कर उनके दिल में प्रवेश कर रहे हैं जहां हमने अपने मूल तनों को, परमधाम को और हर रूह को देखा। वो दिल मूल सागर है और प्रकट होकर वहदत का स्वरूप है। वहदत की निसबत वहदत से है, रूहों की निसबत राज़ जी के दिल से है। इस संसार में धनी अपना दिल दिखाने के वास्ते अपनी रूहों को अपने संग लेकर आये, यह रूहें अब इन न्यामतों को कैसे छोड़ें। न्यामत है धनी का दिल सागर और उस दिल से बहने वाली हर चीज, वहदत, खिलवत, निसबत आदि। इन न्यामतों को परमधाम की रूहें जो इस संसार में धनी के संग आई हैं वो कभी नहीं छोड़ेंगी।

ए कदम ताले मोमिन के, लिखी जो निसबत।
तो आठों जाम रूह अटकी, बीच अर्स खिलवत।।(सिनगार 6/9)

यह जो चरण कमल हैं वो रूहों के सुहाग है । जैसे इस संसार में विवाहिता को सौभाग्यवती है वैसे ही रूहों का सौभाग्य है कि धनी के चरण कमल रूहों के दिल में हमेशा बसे रहें तो हम उनको सौभाग्यवती कह सकते हैं। इन रूहों की तो इन चरणों से अखंड निसबत है। खिलवत धनी के दिल को कहते हैं जहां हर रूह विराजती है। धनी के दिल और उनके चरण कमल का सीधा संबंध है। चरण को थामा और धनी के दिल में पहुँच गये। चरण अर्श की हक़ीक़त का स्वरूप और दिल मार्फ़त का स्वरूप है अगर हक़ीक़त से उड़कर हमें मार्फ़त में पहुँचना है, तन को धारण कर मूल दिल में पहुँचना है तो वो धनी की मेहर है जो निसबत के कारण है।

लग रहे हक कदम को, सोई रूह अर्स की।
ए रस अमृत अर्स का, कोई और न सके पी।।(सिनगार 6/10)

इस संसार में जो रूहें प्राणनाथ जी पर फ़िदा होकर आई हैं वो रस के सागर को पा जाती हैं। रस का सागर ही निसबत का सागर है। निसबत के सागर को अमृत सागर कहा जाता है। क्योंकि निसबत अखंड निसबतियों का ख़ज़ाना है। वो अखंड है इसलिए वो अमृत है। सब जानते हैं कि अमृत रस पीने से अखण्डता मिलती है।रूहों की निसबत अखण्ड है शाश्वत है तभी तो इसे अमृत सागर भी कहते हैं। वो निसबत का रस धनी के दिल के सागरों का रस इश्क़ का रस जो आनंद है उसे केवल रूहें ही पी सकती हैं और कोई नहीं पी सकता।

जो कोई अरवा अर्स की, हक कदम तिन जीवन।
सो जीव जीवन बिना क्यों रहे, जाके असल अर्स में तन।।(सिनगार 6/11)

जो धाम की अंगनाएँ हैं वो धनी के चरणों के बिना नहीं रह सकती क्योंकि यह चरण कमल ही उनके प्राण हैं। चरणों के नाथ राज़ जी हैं तो राज़ जी रूहों के प्राणनाथ हुए।

हकें अर्स कह्या अपना, जो अर्स दिल मोमिन।
सो मोमिन उतरे अर्स से, है असल निसबत तिन।।(सिनगार 6/12)

धाम धनी ने जब अपने चरण कमल रूहों के हस्त कमल में रख दिये, इस संसार में भी अपने चरण कमल रूहों के दिल में रख दिये और धाम में भी उनके दिल में रख दिये तो राज़ जी का दिल और इस संसार में रूहों का दिल अरस परस हो जाते हैं।

रूहें उतरी अपने तन से, और कह्या उतरे अर्स से।
तन दिल अर्स एक किए, हकें कदम धरे दिल में।।(सिनगार 6/23)

जब धाम धनी ने अपनी मेहर से रूहों के दिल में अपने चरण कमल को रख दिया तो तन हक़ीक़त, दिल मार्फ़त, अर्श जहां धनी की बैठकी है वो सब यहाँ पर आत्माओं के दिल में आ जाता है। यह रूहों को सिखापन दिया है कि अपने दिल में धनी के स्वरूप को देखो। यहाँ पर चितवन में धनी ने रूहों के दिल को ही मूल मिलावा बना रखा है उसे वहीं पर देख लो और अगर दिल में कोई ग़ैर बात आती है तो हम रूह कहलाने में शर्मिंदगी महसूस करेंगे। धनी के चरणों के इलावा हमारे दिल में कुछ और न रहे।

सांसारिक बातें तो हमें बहुत भटका देती हैं लेकिन अगर धनी के चरण हमारे दिल के अंदर रहते हैं तो जानो आत्म का शाश्वत सम्बन्ध धनी से है और तभी आत्म का मूल तन परात्म का तन है। हम जानते हैं कि परातम का अखण्ड सम्बन्ध इन चरणों से है, रूहों के दिल में चरण कमल शाश्वत से रहते हैं, तभी तो मोमिन का दिल अर्श कहलाता है।

सिफत ऐसी कही मोमिनों, जाके अक्स का दिल अर्स।
हक सुपने में भी संग कहे, रूहें इन विध अरस परस।।(सिनगार 21/81)

ए जो मोमिन अक्स कहे, जानों आए दुनियां माहें।
हक अर्स कर बैठे दिल को, जुदे इत भी छोड़े नाहें।।(सिनगार 21/82)

रूहों के दिल में तो धनी सदैव से विराजमान है, परात्म के दिल में भी और उनके अक्स के दिल में भी। तो उनको कहीं बाहर से आकर नहीं बैठना बल्कि वो तो हमेशा से ही वहीं विराजमान हैं। तभी तो धनी ने फरमाया है कि तन दिल अर्स एक किए, हकें कदम धरे दिल में।

धनी ने यहाँ आकर रूहों के दिल में चरण नहीं धरे बल्कि वो तो धाम से ही अर्श है। इस संसार में जो उनका सुरता स्वरूप है, प्रतिबिम्बित स्वरूप है उनके दिल में भी तो धनी के चरण कमल ही होंगे और यही अर्श की असल निसबत है।

ए निसबत असल अर्स की, हकें जाहेर तो करी।
दिल मोमिन अर्स तो कह्या, जो रूहें दरगाह से उतरी।।(सिनगार 6/23)

तुम रूहें मेरे नूर तन, सो वहदत के बीच एक।
इस्क बेवरा बका मिने, क्यों पाइए ए विवेक।।(खिलवत 13/12)

राज जी ने ढिंढोरा पीट दिया कि ऐ मोमिनों तुम मेरे नूर तन हो यानी मेरे दिल की लहरों के वहदत स्वरूप हो।राज़ जी का दिल एक मूल अद्वैत वहदत है, उसकी लहरें वहदत रूहों के स्वरूप हैं।लहरों की सागर से निसबत यानी चरण कमलों से निसबत।

ए चरन निमख न छोड़िए, राखिए माहें नैनन।
ए निसबत हक अर्स की, मेरे जीव के एही जीवन।।(सागर 6/11)

ए निसबत असल अर्स की, हकें जाहेर तो करी।
दिल मोमिन अर्स तो कह्या, जो रूहें दरगाह से उतरी।।(सिनगार 6/23)

किसी के दिल में यह भावना नहीं आनी चाहिए कि परातम यहाँ नहीं है क्योंकि वो किस प्रकार से आई हैं यह धनी ने बड़ी अच्छी तरह से समझाया है ।

हम ब्रह्मसृष्टि आई धाम से, अछर खेल देखन।
खेल देख के जागिए, घर असलू अपने तन।।(किरन्तन 96/8)

रूह मेरी क्यों न आवे तोहे लज्जत, तोको हकें कही अर्स की।
अर्स किया तेरे दिल को, तोहे ऐसी बड़ाई हकें दई।।(सिनगार 11/1)

यहाँ पर इंद्रावती जी को शोभा दी है। अगर एक रूह की शोभा होती है तो हर रूह की शोभा होती है।बस हमें यह करना है कि इंद्रावती जी जिस प्रकार से माया से अलग हुई हैं वैसे ही हर रूह को भी माया से अलग रहने का सिखापन है। इंद्रावती जी खुद पर घटा कर कह रही है, तेरे दिल को धनी ने अर्श कर तुझे बढ़ाई दी है कि तूने अपने दिल में धनी के स्वरूप को धारण किया है फिर भी तुझे लज्जत क्यों नहीं आ रही। जबकि उनको तो हर लज्जत आ चुकी है, यह हर रूह को सिखापन है कि जैसे धनी की कृपा से मुझे धनी के दिल की लज्जत मिली है वैसे ही तुम भी दुनिया से अलग होकर धनी के चरणों में अपना दिल लगाकर उनके चरणों को अपने दिल में देख सको। हमारे दिल में धनी के चरण कमल तो पहले से ही विराजते हैं लेकिन हमें दिखाई नहीं देते क्योंकि एक पर्दा पड़ा हुया है।

जो कदी तैं आई नहीं, तोमें हक का है हुकम।
हुज्जत दई तोको अर्सकी, दिया बेसक अपना इलम।।(सिनगार 11/2)

यहाँ पर साक्षात नूरी तन से कोई नहीं आ सकता क्योंकि नूर की एक किरण की बूँद भी अगर आ जाये तो यह ब्रह्मांड तबाह हो जाएगा। इस संसार में धनी के दिल का स्वरूप जो हुक्म है वो धनी के दिल की रूहों की सुरता लेकर धनी के संग आता है।

रूहों को हुज्जत दी यानी रूहों को अधिकार दिया। उन्हें अपना बेशक इल्म दिया और उसके द्वारा रूहें अर्श की अधिकारी हो गई। तुमने यह बात जानी नहीं थी इसलिए अब जान लो।

बिन जामें देखों अंगको, आसिक सब सुख चाहे।
बागा पेहेने हमेसा देखिए, कछू ए छबि और देखाए।।(सिनगार 11/3)

इसके भाव को हम सब को ग्रहण करना हैं। बागा यानी धनी के वस्त्र आभूषण सब धनी के अंगों की ही शोभा है यानी अर्श का तन है और वो भी रूह है वहदत का स्वरूप हैं। खुले अंग श्रृंगार में जो छाती है हैड़ा है जिसके

अंदर धनी का दिल सुशोभित है मार्फ़त सुशोभित है। अगर हक़ीक़त के अन्दर मार्फ़त देखना है तो बिन जामे देखो। धनी के हर अंग को अगर बिन जामे देखोगे तो पाओगे कि दिल की एक एक शोभा धनी के हर अंग में बसती है।

चरणों में फ़ना पर तली में, लॉक पर, एड़ी में, घूँटी पर, काड़ो अंग में टखने में, पिंडली में, घुटने में, जाँघों में, कटी यानी कमर में, पसली में, पीठ में, बाजू में, हस्त कमल में, मुंदरी में, हस्त कमल के कोमल सुगन्धित स्पर्श का अपनी गालों पर सुख लीजिए।कंधों को देखो, सुराहीदार गर्दन को देखो, गौर उज्ज्वल गहरी लालक लिये हुए मुख चौक, हरवटी, अधुर, दांत, गाल, नासिका, श्रवण अंग, नैन पलक, भौहें, बौरोनियाँ, भृकुटी, निलवट, पेशानी मस्तक, शीश, सिर पर अमरद झुलफें, पाग सब को देखो। हर अंग में होड़ लगी है। पाग भी रूह है केश भी रूह है। धनी ने अपने अंगों पर हर रूह को ही धारण कर रखा है।पाग और केश में तो मानो नूरी जंग हो रही हो। केश पर पाग विराजती है और पाग पर कलंगी और अनेक नंगों से जड़ी दुगदुग्गी विराजती है। हर रूह को इस अद्‌भुत स्वरूप को नूरी जंग को अपने दिल में इसे आत्मसात् करना है। जब जामा की बात करें तो वो भी रूह है धनी के अंग हैं।

रूह सूरत नहीं तत्व की, जो वस्तर पेहेन उतारे।
नूर को नूर जो नूर है, कौन तिनको सिनगारे।।(सिनगार 21/26)

धनी के अंगों की शोभा नूर से है। जो वस्त्र और आभूषण है उनका नूर धाम धनी का दिल है तो उसे कौन श्रृंगारे। इस तरह अंग वस्त्र आभूषण और धनी का दिल, दिल को श्रृंगारा नहीं जा सकता।

इस्क है वहदत में, कहूं पाइए न दूजे ठौर।
दूजे ठौर तो पाइए, जो होवे कोई और।।(सिनगार 20/21)

रूह सूरत नहीं तत्व की, जो वस्तर पेहेन उतारे।
नूर को नूर जो नूर है, कौन तिनको सिनगारे।।(सिनगार 21/26)

धनी ने सनन्ध ग्रंथ में नूर का बहुत विस्तृत वर्णन किया है वो भी अपने आप में सौंदर्य का एक स्वरूप है। रास केवल ब्रह्म की भूमि पर हुई जो अक्षर ब्रह्म की बुद्धि का स्वरूप है उनके दिल का स्वरूप सत्त स्वरूप ब्रह्म है। नूर का नूर जो परमधाम है उसे कौन श्रृंगार सकता है ।

बिन जामें देखों अंगको, आसिक सब सुख चाहे।
बागा पेहेने हमेसा देखिए, कछू ए छबि और देखाए।।(सिनगार 11/3)

वस्त्र और आभूषण जो उनके अंगों की शोभा है वो भी नूर है, रूह है। धाम धनी का अंग अंग नूर वो भी रूह और उसका भी जो नूर है वो धाम धनी का दिल है। धाम धनी के दिल का श्रृंगार कौन कर सकता है। जो अनंत आनंद और अनंत सागरों का परम सत्य का मार्फत का मिला जुला स्वरूप है। सिनगार का छठा प्रकरण धनी के चरणों का है और ग्यारहवां प्रकरण उनके दिल का है। चरण रूहों की निसबत का स्वरूप हैं।

ए चरन निमख न छोड़िए, राखिए माहें नैनन।
ए निसबत हक अर्स की, मेरे जीव के एही जीवन।।(सागर 6/11)

चरण कमल और हक हैड़ा के दोनों प्रकरणों को मिलाकर पढ़ो तो पाओगे कि धनी ने रूहों को अपने दिल का सुख देने के लिए अपने चरण कमल एक ज़रिया दिया है जिनसे रूहों की अखण्ड निसबत है।

दिल हक का और हादी का, ए दोऊ दिल हैं एक।
एकै मता दोऊ दिल में, ए अर्स रूहें जाने विवेक।।(सिनगार 11/24)

राज़ जी का दिल, अल्लाह महोबा मासूक सो खासी खसम श्यामा जी का दिल ,दोनों एक ही हैं।श्यामा जी के दिल का स्वरूप रूहें हैं और राज जी के दिल का स्वरूप श्यामा जी हैं। इन तीनों दिलों को एक बार बड़े प्यार से निहारे, रूह का दिल रूह के मूल तन का दिल श्यामा जी का दिल और राज जी का दिल इन तीनों की अखंड निसबत है।

धाम की जो रूहें यहाँ पर आई हैं वो देख लो क्योंकि धनी फ़रमाते हैं कि जो धाम से आई हैं उनको ही मैंने अपने इल्म से जागृत किया है। यह इल्म राज़ जी के दिल में, श्यामा जी के दिल में और श्यामा जी के दिल से बहते हुए रूहों के दिल में परातम के दिल में, पहुँच जाता है तथा परात्म और आत्म का दिल भी एक है।

अन्तस्करन आतम के, जब ए रह्यो समाए।
तब आतम परआतम के, रहे न कछू अन्तराए।।(सागर 11/44)

दिल हक का और हादी का, ए दोऊ दिल हैं एक।
एकै मता दोऊ दिल में, ए अर्स रूहें जाने विवेक।।(सिनगार 11)24)

जो गंज हक के दिल में, सो पूरन इस्क सागर।
कोई ए रस और न ले सके, बिना मोमिन कोई न कादर।।(सिनगार 11/25)

यह मता ख़ज़ाना है जो हक़ के दिल का ख़ज़ाना है। कहाँ इश्क़ ढूँढना है? बस धनी के चरण पकड़ो दिल पकड़ो हक़ीक़त मार्फ़त पकड़ो तो अपने आप इश्क़ हमारे अंग अंग में समा जाएगा।

जो गंज हक के दिल में, सो पूरन इस्क सागर।
कोई ए रस और न ले सके, बिना मोमिन कोई न कादर ।।(सिनगार 11/25)

सिर्फ़ ब्रह्मसृष्टियाँ ही धाम धनी के दिल के इश्क़ का रस पीने का सामर्थ्य रखती हैं।

जो सुराही हक की पीवना, सो इस्क हक दिल मिने।
सो मोमिन पीवे कोई पैठके, और पिया न जाए किने।।(सिनगार 2/20)

तो अर्स कह्या दिल मोमिन, जो इन दिल में हक बैठक।
तो इत जुदागी कहां रही, जहां हकै आए मुतलक।।(सिनगार 11)26)

धनी अपने पूर्ण स्वरूप से आकर आत्माओं के दिल में बैठ गये।

ए क्यों होए बिना निसबतें, इतहीं हुई वहदत।
निसबत वहदत एकै, तो क्यों जुदी कहिए खिलवत।।(सिनगार 11/27)

जिस दिल के अन्दर वहदत होती है उसकी और वहदत की निसबत होती है।

(प्रलेखनः राजबाला)

ए हक बातन की बारीकियां

नरेंद्र पटेल
यू.एस.ए.

'सिनगार' ग्रंथ में एक चौपाई है-

ए हक बातन की बारीकियां, सो हक के दिए आवत।
ना सीखे सिखाए ना सोहोबतें, हक मेहेरें पावत।।(४/१२)

इस चौपाई का अर्थ या इसका प्रयोग करते हुए सुन्दरसाथ एवं चर्चाकारों को कई बार सुनता हूँ तो मुझे इस प्रकार का अर्थघटन कुछ क्षतिपूर्ण लगता है।

मुझे इस चौपाई का यह अर्थ उचित लगता है कि हक(श्री राज जी) के ज्ञान/इल्म को किसी भी माध्यम से सीख लेना प्रथम सीढ़ी है, लेकिन यह पर्याप्त नहीं है। जहां तक हक के इल्म की बारीकियों के प्राप्त होने का प्रश्न है, यह पूर्णतः उनका अंदरुनी मामला है, और यह दूसरी आवश्यक सीढ़ी है। उल्लेखनीय है कि इस चौपाई में सीखने, सिखाने और सत-संग सोहोबत के लाभ को नकारना उद्देश्य नहीं है, जैसाकि अक्सर सुंदरसाथ को चर्चाकारों द्वारा बताया जाता है।

यद्यपि पूर्व भी मैंने इस विषय पर अपने विचार प्रगट किये हैं लेकिन फिर भी मुझे इसकी स्पष्टता बार-बार करना आवश्यक लगता है। अतः इस संदर्भ में मैं अपना वाणी मंथन-चिंतन प्रस्तुत लेख के माध्यम से पुनः आपके समक्ष रखने का प्रयास कर रहा हूँ।

यह सत्य है कि धामधनी की मेहेर से ही इल्म की बारीकियां दिल में आना संभव है। लेकिन मेहेर के पूर्ण स्वरुप के दो आयाम है - जाहिरी, प्रत्यक्ष या बहिर्मुखी मेहेर और दूसरा बातिनी, अप्रत्यक्ष या अन्तर्मुखी मेहेर। जैसा कि हमनें पूर्व में कहा कि हक के ज्ञान (इल्म) को किसी भी बाह्य माध्यम से सीखना या समझना प्रथम आवश्यक सीढ़ी है जिसे कोई भी नकार नहीं सकता। दूसरी ओर, उस ज्ञान को ध्यान-चितवन में अपने भीतर अनुभूत करना, विकसित करना और उसका रसास्वादन करना दूसरी सीढ़ी है।

पहली सीढ़ी धनी की मेहेर से बाहरी माध्यमों की सहायता से चढ़ी जा सकती है तो दूसरी धनी की मेहेर से भीतरी स्वयं की यात्रा द्वारा चढ़ी जा सकती है। लेकिन, स्मरण रहे कि बाहर से उपलब्ध कुछ भी 'उधारी' होता है, और भीतर की उपलब्धि 'स्वयं अपनी' होती है। जागनी के पथ पर अग्रसर हर सुन्दरसाथ को चाहिए कि वे अपने आपको दोनों ही माध्यमों के लिए खुला रखें। इसमें एक विनम्रता भाव भी है, जो हमें हमारे मिथ्या अहंकार से अनभिज्ञ कराने में सहायता करता है, और हमारी निजी जागनी प्रक्रिया तीव्रता-पूर्वक आगे बढ़ने लगती है। क्योंकि हर सुन्दरसाथ जागनी की अलग-अलग सीढ़ी पर खड़ा हुआ होता है, हमें पता नहीं होता कि कब और कैसे उनके सान्निध्य का विशेष लाभ हमें मिल जाए।

अतः हमें हमारी मनोवृत्तियों को सदा कुछ न कुछ नया सीखने, सिखाने और सत-संग सोहोबत करने के लिए खुला रखनी चाहिए। यदि ऐसा नहीं होता तो श्री मुखवाणी में ज्ञान चर्चा और सुन्दरसाथ की सोहोबत में सत्संग बैठक करने की महिमा नहीं गाई होती। इसी प्रकार, जैसाकि 'किरंतन' वाणी का कथन है-

इत बात बड़ी है समझ की, और ईमान का काम।
साथ जी समझ ऐसी चाहिए, जैसा कह्या अल्ला कलाम।।(९४/१८)

अर्थात् सजगता-पूर्ण खुले विचारों के लिए तत्परता (open-mindedness), हृदय की कोमलता, विनम्रता, कृतज्ञता भाव आदि मेहेर के ही विविध रूप हैं, जो हमें हक-इल्म की बारीकियां प्राप्त कराने में सहायक होते हैं। ये बारीकियां चिंतन-चितवन में धनी के लाड-प्यार के रूप में महसूस होती है।

संक्षेप में, सार रूप से यही कहा जा सकता है कि परमधाम के ज्ञान की बारीकियां उसे सीखने, सिखाने या सोहोबत मात्र से नहीं, बल्कि उस अर्जित ज्ञान को ध्यान-चितवन में अपने भीतर विकसित/अनुभूत करने से प्राप्त होती हैं। यहां यह स्पष्ट करना भी आवश्यक है कि अनुभूति कहने या सीखने का विषय नहीं है, महसूस करने का है। स्थायी अनूभूति आनंद की ओर ले जाती है। इस प्रकरण में हक-इल्म की कौनसी बारीकियां उपलब्ध होने की बात हो रही है, यह भी विचारणीय है। आतम फरामोशी से जागे के प्रकरण (सिनगार प्रकरण ४) की प्रथम ११ चौपाईयों में इन बारीकियों की ओर ध्यान दिलाया गया है। मेरे वाणी-मंथन के अनुसार, आत्म-जागनी की विविध निशानियों का हमारे 'दिल में चुभ जाने' को बारीकियां उपलब्ध होना कह सकते हैं-

१. धनी की नूरी शोभा और उनके हृदय के लाड-प्यार भरे दिव्य गुण - उनकी अखंडता, निर्मलता, एकत्व, शांति, इश्क, इल्म, निस्बत और मेहेर आदि का रस मिलना शुरू हो जाना बारीकियों की उपलब्धि कह सकते हैं। यही वे निशानियाँ है।

२. ऐसी समझ कि धनी के दर्शन उन्हीं की मेहेर से और उन्हीं के जोश के बल पर संभव है।

३. उन्हीं के हुक्म से सबकुछ हुआ है, हो रहा है और होगा, यह समझ इल्म की बारीकियां ग्रहण होने की साक्षी है।

४. नींद उड़ने पर स्वप्न नहीं रह सकता, लेकिन धनी की मेहेर, हुक्म, जोश और इल्म की बरकत से स्वप्न में भी उनके दर्शन हो सकते हैं अर्थात् जागृति संभव है। ऐसी समझ इल्म की बारीकियां ग्रहण होने की साक्षी है।

५. इन बारिकियों को ग्रहण करने वाले सुन्दरसाथ को यह भी स्पष्ट नजर आने लगता है कि जिसमें जितना हिस्सा नींद का है, उतनी ही उस में बेसुधी होती है। लेकिन यदि धनी चाहे तो उनकी मेहेर और हुक्म के अनुसार बिना जोश की सहायता के भी दर्शन हो सकते हैं।

६. यदि धनी स्वयं चाहे तो वे असंभव को भी संभव कर सकते हैं। स्वप्न में भी परमधाम की सब हकीकत स्पष्ट कर देते हैं, लेकिन मोहवश कोई इसे समझ नहीं पा रहा है।

७. बारीकियां उपलब्ध हुई आत्मा को इस वास्तविकता का पता चल गया होता है कि धनी जी ने जो दिल में लिया है, वैसे ही सबकुछ हो रहा है। किसी विशेष कारण हेतु इश्क और साहेबी के परिचय हेतु ही ऐसा खेल सजाया गया है।

सत्य प्रसंग

परमात्मा क्या है ?

एक बार जागनी रतन सरकार श्री का इलाहाबाद विश्वविद्यालय में जाना हुआ। वे अपने एक मित्र से मिलने गये थे। वहां के छात्रों से उन्होनें सरकार श्री से धर्म के विषय मे कुछ प्रश्न पूछने को कहा। छात्रों ने एक प्रश्न किया, 'परमात्मा क्या है?' किंतु साथ ही यह भी कहा कि इस प्रश्न का उत्तर बिना किसी धर्मग्रंथों के उदाहरण के होना चाहिये। यदि बिना उदाहरण के बता सकते हैं तब तो उत्तर दीजिएगा, अन्यथा नहीं क्योंकि धर्मग्रंथों के बारे मे हम सुनते– सुनते थक गये हैं, लेकिन हमारे पल्ले कुछ नहीं पड़ा है।

छात्रों की इन बातों को सुनकर सरकार श्री ने उनसे एक बात पूछी, 'क्या आप यह बात मानते है कि परमात्मा, चाहे जो कुछ भी है, सत्य है। यदि आप यह बात मानते हैं तो फिर बिना किसी शास्त्र के उदाहरण के बताया जा सकता है कि परमात्मा क्या है?' इसके उत्तर में सभी छात्रों ने कहा, 'यह तो हम सभी मानते है, वह जो कुछ है सत्य है।'

सरकार श्री ने पुनः पूछा, 'जो वस्तु सत्य होगी, वह चेतन होगी या जड़?' इस पर छात्रों ने उत्तर दिया, 'सत्य वस्तु कभी जड़ नहीं हो सकती। वह चेतन ही होगी।' तब सरकार श्री ने उनसे पूछा, 'अब बताइये, जो वस्तु चेतन होगी, वह कुछ न कुछ लीला (कार्य) तो अवश्य करती होगी या चुपचाप बैठी रहेगी।' इस पर छात्रों ने कहा, 'चेतन वस्तु शान्त नहीं बैठ सकती, वह कोई न कोई लीला अवश्य करती रहेगी।' फिर सरकार श्री ने पूछा, 'सत्य और चेतन वस्तु में दुःख की लीला होगी या आनंद की?'

तब छात्रों ने उत्तर दिया, 'सत्य और चेतन वस्तु में आनंद की लीला हो सकती है, दुःख की नहीं, क्योंकि दुःख तो असत्य और जड़ वस्तु से होता है।' तब सरकार श्री ने कहा, 'अब आप स्वयं मिला लीजिए, वही परमात्मा है। सत + चित + आनंद, जब इन तीनों को मिलाया जाता है तो सच्चिदानंद बनता है। अर्थात् सच्चिदानंद ही परमात्मा है।'

सभी ने इस बात को स्वीकार कर सरकार श्री का धन्यवाद किया।

बीतक प्रसंग

जयराम भाई कंसारा के वृतांत से शिक्षा

नीना भुच्चर

चंडीगढ़

जब अहमदाबाद (गुजरात) से श्री जी दीवबन्दर में आये, तो वहाँ श्री जी जयराम भाई को मिले। श्री जी को देखकर जयराम जी बहुत ही खुश होकर उनसे गले मिले।

जब जयराम भाई ने उनसे आने का कारण पूछा तो श्री जी ने उत्तर देते हुए कहा 'हम आए तुम्हारे काज'। अर्थात् जयराम भाई, मैं तो तुम्हारे लिये आया हूँ ताकि तुम्हें सावचेत कर सकूँ। यह धामधनी का मेरे लिये आदेश है कि सुन्दरसाथ को खोज-खोजकर माया से निकालूँ और उन्हें धामधनी के चरणों से जोडूँ।

उन्हें श्री जी ने श्री देवचन्द्र जी के धामगमन से लेकर अब तक की सारी जागनी के बारे मे बताया और कहा कि तुम इतने दिन से दीवबन्दर में हो लेकिन तुमने तो किसी भी सुन्दरसाथ को माया से निकालकर परमधाम की राह नहीं बतायी। ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि तुमने सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी से तारतम ज्ञान तो ग्रहण किया लेकिन अपने हृदय में इसको आत्मसात् नहीं किया।

तुम्हें माया में इस तरह से डूबना शोभा नहीं देता। तुमने तो श्री देवचन्द्र जी के अन्दर अपने धामधनी की पहचान कर ली थी तो तुम फिर कैसे भूल गए। तुम तो माया में ऐसे मिल गये हो जैसे तुम्हारा परमधाम से कोई नाता ही न हो। तुम्हें माया में इस तरह से नहीं फँसना चाहिये। तुम तो केवल अपने मूल स्वरूप को देखो कि तुम मूल मिलावे में धामधनी के चरणों में बैठे हो। जब हम माया का खेल देखने के लिये आये हैं तो क्या इसमें स्वयं को, धामधनी को तथा अपने मूल घर को इस तरह से भूल जाना उचित है?

इस प्रकार श्री जी ने उसे खण्डनी की बहुत-सी बातें कही, कई दृष्टान्त देखकर उन्हें माया से जगाया और जागनी के पथ पर चलने को प्रेरित किया।

श्री जी ने उससे कहा कि तुम कब तक अपने हथौड़े से एहरण पर कूट-कूटकर कांसे से बर्तन बनाते रहोगे? अब तो कियामत का सुगरा दौर प्रारंभ हो चुका है यानी कि यह जागनी लीला का प्रथम चरण है और परमधाम के

अलौकिक ज्ञान का प्रकाश फैलने से माया का अन्धकार दूर होने लगा है। चौदह लोकों का यह स्वाप्निक ब्रह्माण्ड महाप्रलय में लय हो जाने वाला है। तुम परमधाम की ब्रह्मसृष्टि कहलाते हो, लेकिन तुम्हें इस बात की लज्जा नहीं आती कि तुमने राज जी से पीठ मोड़ रखी है। इस झूठी दुनिया में रहते-रहते तुम्हारे जीवन का एक लम्बा समय बीत चुका है। अब तुम्हीं सोचो कि तुम्हें इस दुनिया में कितने दिन जिंदा रहना है? अपने परमधाम की कुछ तो पहचान करो।

आज तक इस झूठी दुनिया में किसी को भी तृप्ति नहीं मिली है। जिस प्रकार सूखी हड्डी को चूसने वाला कुत्ता अपने ही दाढ़ों से निकलने वाले अपने खून को पीकर सोचता है कि मैं हड्डी का खून पी रहा हूँ, उसी तरह तुम इस नश्वर संसार के मोह एवं सुखों के झूठे बन्धनों में फंसकर अपने को सुखी मान रहे हो, यही तुम्हारी भूल है। श्री राज जी के अखण्ड सुखों को छोड़कर मृगतृष्णा के समान दिखायी देने वाले जिन लौकिक सुखों के पीछे भाग रहे हो, इसके परिणामस्वरूप तुम्हें तिरस्कृत होना पड़ता है। यह सिलसिला कब तक चलता रहेगा?

वस्तुतः उम्र बढ़ने के साथ-साथ विषयों को भोगने वाली शक्ति तो क्षीण होती जाती है, लेकिन आकांक्षा पूर्ववत् बनी रहती है। ज्ञान, वैराग्य और विवेक के अभाव में यह आकांक्षा और बढ़ती जाती है। परिणामस्वरूप संसार में अपने ही सगे-सम्बन्धियों से तिरस्कृत होना पड़ता है। श्री जी का संकेत इसी तरफ है कि जयराम भाई कब तक तुम यूँ ही अपमान का घूंट पीते रहोगे?

यह बात श्री जी ने उस समय जयराम भाई को जरूर कही लेकिन वर्तमान में यह हम सब पर लागू होती है।

श्री जी ने उसे कहा कि संसार के सारे प्राणी तो अपनी इन्द्रियों के विषय भोगों में फँसे ही हुए हैं क्योंकि यह बेचारे तो मायावी जीव है लेकिन तुम तो ब्रह्मसृष्टि हो तो फिर तुम ऐसा कैसे कर सकते हो। तुम्हें तो रात-दिन अपने प्राणेश्वर अक्षरातीत की चर्चा में डूबे रहना चाहिये था। लेकिन तुम्हारे अन्दर तो उसकी सुगन्धि भी नहीं है। न तो तुम चर्चा करते हो और न ही परमधाम तथा युगल-स्वरूप की चितवनि करते हो। यही नहीं, न तो तुम सुन्दरसाथ को एकत्रित कर आत्म-जागृति का कोई कार्यक्रम करते हो, न ही अपने दिल को धामधनी के प्रेम से भरने का प्रयास करते हो।

श्री जी के इन दिव्य वचनों को सुनकर जयराम भाई फूट-फूटकर रोने लगे और उन्होंने अपनी सारी भूल स्वीकार की। उन्होंने स्वयं को धिक्कारा और स्पष्ट कह दिया कि अपनी आत्म-जागृति के लिये मैंने कुछ नहीं किया। इस मायावी जगत में निश्चित रूप से हमें अपने धाम की याद नहीं रही थी। माया के कामों में फंसकर हमारी स्थिति ऐसी हो गयी कि हम अपने प्राणवल्लभ अक्षरातीत को भुला बैठे। न तो हमने धामधनी से अपने मूल सम्बन्ध को जाना और न ही उनके स्वरूप की पहचान की। यदि हमें अपने धाम धनी के प्रति कुछ भी ईमान होता, तो हम इतनी बड़ी भूल क्यों करते?

यह तो श्री राज जी की अपार मेहर है, जो उन्होंने मेरी सुधि लेने के लिये आपको यहां भेज दिया। हम तो संसार के मोह जाल में डूबे पड़े थे, किन्तु धामधनी ने हमारे अवगुणों को न देखते हुये, आपके रूप में हमारी सुधि ली। हमारे वास्ते भी धनी ने यही दोहराया है, हमारी सुधि लेने के वास्ते भी धनी तन बदल-बदलकर हमें जागृत कर रहे हैं

और हमारे अवगुणों को ना देखते हुए अपने वांगमय सरूप से हम सब के साथ ही रहते है लेकिन हम माया में ऐसे फंसे हैं कि हम तो उनकी ओर देख भी नहीं रहे हैं। अब तो इस ब्रह्मांड का लय होने वाला है अब तो हमें जागृत होकर चितवन में डूबना होगा और हर पल उनकी ही बातें करनी होगी।

उक्त प्रसंग से हमें क्या शिक्षा मिलती है ?

१. हमें केवल तारतम ग्रहण ही नहीं करना है बल्कि उसे अपने हृदय में आत्मसात भी करना है।

२. हमें हर पल अपने आत्म स्वरूप में स्थित रहना चाहिए ताकि हम इस माया मे डूब न सकें।

३. इस संसार में हम जिन सुखों और रिश्ते नातों के पीछे भागते हैं वह हमें अंत में दुख ही देते हैं और हम बुरी तरह से तिरस्कृत होते हैं।

४. इस संसार में निश्चित रूप से हमें अपने धाम की याद नहीं रही, माया के कामों में फंसकर हमारी स्थिति ऐसी हो गयी है कि हम अपने प्राणवल्लभ अक्षरातीत को भुला बैठे हैं लेकिन हमें ऐसा करना

सेवा

सेवा चार प्रकार की होती है-

१. आत्मा के धरातल पर।

२. जीव के धरातल पर।

३. मन के धरातल पर।

४. शरीर के धरातल पर

इन सबका अलग-अलग महत्व और उपयोगिता है।

आत्मिक सेवा जंहा मारफत के धरातल पर होती है, वहीं जीव भाव से की हुई सेवा हकीकत के धरातल पर होती है। मानसिक सेवा अन्तःकरण (मन, चित्त, बुद्धि, अंहकार) से होती है, अर्थात मन से वाणी मनन करना, चित्त से चिन्तन करना, बुद्धि से विवेचना करना तथा अहम् भाव से स्वयं को अक्षरातीत परब्रह्म श्री राज जी की अर्धांगिनी मानना। शरीर सेवा से तात्पर्य हमारा शरीर हर पल धनी तथा सुन्दर साथ जी की सेवा में तत्पर रहे।

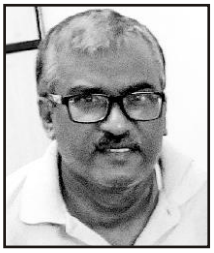

क्या तारतम जोर से बोलना गुनाह है ?

पारेन पटेल

अहमदाबाद

श्री कुलजम स्वरूप साहेब का कथन है-

निज नाम सोई जाहेर हुआ, जाकी सब दुनी राह देखत।
मुक्तदेसी ब्रह्मांड को, आए ब्रह्म आतम सत।।(किरंतन ७६/१)

अर्थात् अब अनादि अक्षरातीत सच्चिदानन्द परब्रह्म का वह नाम (पहचान) जाहिर हो गया है, जिसकी प्रतीक्षा सारी दुनिया कर रही थी। परमधाम में रहने वाले, अखण्ड स्वरुप वाले वे ब्रह्ममुनि इस संसार में प्रकट हो गये हैं, जो सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को अखण्ड मुक्ति देंगे।

किंतु, कैसे? क्या कान में बोलने से? क्या निजनाम (तारतम) को जोर से बोलना गुनाह है? उपरोक्त प्रश्न को लेकर कई सुन्दरसाथ का मत है कि तारतम को ऊंची आवाज में न बोलने की परंपरा श्री जी के समय से चली आ रही है जबकि बीतक साहेब या श्री कुलजम वाणी में कहीं भी ऐसी परंपरा का उल्लेख नहीं मिलता है।

यहां यह भी विचारणीय है कि जिसको हम परंपरा कहते है, वह परंपरा गलत है या सही, ऐसा तय करने वाले कौन हैं? झूठी परंपरा को बनाने वाले कौन होते हैं और झूठी परंपरा को तोड़ने वाले भी कौन होते हैं? हम जानते हैं कि जब हम वृक्ष की जड़ में पानी डालते हैं तो यह वृक्ष के सभी भागों में पहुंचता है, लेकिन पत्ते और डाली पर पानी डालने से वृक्ष के एक भी अंग को पानी का कोई लाभ मिलता नही है।

इसी प्रकार, यदि तारतम बीज है तो श्री कुलजम वाणी तारतम रूपी बीज का ही विस्तार अर्थात् वृक्ष है। एक तरफ हम वटवृक्ष समान श्री कुलजम वाणी के विषय में कहते हैं- 'ए वाणी गरजत माझ संसार' और दूसरी तरफ बीज समान तारतम को गुप्त रखने की बात करते हैं। यह हम सभी सुन्दरसाथ के लिए कितनी हास्यास्पद बात है?

बीतक साहेब में श्री हरिदास जी द्वारा सतगुरु धनी श्री देवचन्द्र जी को नाम सुमरन देने का एक प्रसंग आता है। जब हम उन दोनों के बीच हुए वार्तालाप पर विचार करते है तो हमें ज्ञात होता है कि आज दिन तक लोगों को गुमराह करती वर्षों से चली आ रही एक गलत परंपरा को सतगुरु धनी श्री देवचन्द्र जी ने बड़ी सहजता से नकार दिया है-

हरिदासजी ने पूछिया, तुमको नाम सुमरन देवें आज ।
भद्र भेष हो आओ, तो होय तुम्हारा काज ।।३/३०।।

तब ही भद्र भेष होय के, आय के बैठे पास ।
पूछा नाम सुमरन काहू का लिया है, कह्या सन्यासी का कर विस्वास ।।३/३१।।

कहा सोइ नाम सुमरन, चिट्ठी में लिखकर ।
रोटी में चिट्ठी वाय के, देवो सन्यासी को यों कर ।।३/३२।।

तब श्री देवचन्द्रजी ने कह्या, इनसे कछू न होय ।
जो नाम ओ जोरावर, तो क्यों कर निकसे सोय ।।३/३३।।

जो तुम्हारा नाम जोरावर, ओ आप ही होवे दूर ।
ए तो अर्थ ऊपर का, ए आम का मजकूर ।।३/३४।।

सुन ऐसी बात हरिदास जी, बड़ो जो पाया सुख ।
दियो नाम सुमरन, देखो सरूप सनमुख ।।३/३५।।

यह कितनी विडंबना है कि जब तारतम के अवतरण होने से पहले बिना जाग्रत बुध और निज बुध से सतगुरु धनी श्री देवचन्द्र जी श्री हरिदास जी को नाम सुमिरन मंत्र जोरावर होने की बात समझा सकते हैं तो हमें तो जाग्रत बुध एवं निज बुध दोनों मिली हुई है और फिर हम तारतम को ऊंची आवाज में न बोलने की ग़लत परंपरा का समर्थन क्यों करते हैं? क्या जाग्रत बुध एवं निज बुध प्रदान करने वाला तारतम दुनिया के सभी मंत्रों से बढ़कर जोरावर नही है? हमें तारतम को ऊँची आवाज़ से बोलने में किस बात का डर लगता है? यह वाणी गरजत माहें संसार की बात है तो तारतम को ऊँचे स्वर में न बोलने की झूठी गलत परंपरा अभी तक क्यों चलन में है?

आश्चर्य की बात तो यह है कि तारतम के अवतरण के पहले गायत्री मंत्र को मानने वाले मन ही मन गुप्त रूप से इसे बोलते थे, तथा दूसरों से इसको छुपाते थे। लेकिन आज वही गायत्री मंत्र को जोर-शोर से ऊँचे आवाज में गायन के साथ पूरी दुनिया बोलती है। गायत्री मंत्र का ऊँचे आवाज़ में गायन करने वाले सभी के सभी अक्षरातीत को अभी तक जानते भी नहीं है, फिर भी एक गायत्री मंत्र को पूरी दुनिया में ऑडियो/वीडियो के माध्यम से संगीत के साथ ऊँचे आवाज में बोलकर खुल्लेआम प्रचार करते हैं। उन्होंने तो परिस्थिति की वास्तविकता को स्वीकार कर गायत्री मंत्र को पूरी दुनिया में फैलाने का काम हाथ पर लिया है, लेकिन अपने आप को जाग्रत कहने वाले हम सुन्दरसाथ पता नहीं आज भी कौनसी दुनिया में जी रहे हैं?

यहां यह स्पष्ट करना भी आवश्यक है कि तारतम के तीन प्रयोजन हैं। मंत्र के रूप में यह अखंड मुक्ति प्रदान करता है जो जीव सृष्टि सहित सबको मिलनी है। ज्ञान के रूप में यह जाग्रत करता है बशर्ते कि इसे केवल मन में न उच्चारित कर उच्च स्वर में उच्चारित किया जाय तथा तीसरा और सबसे महत्त्वपूर्ण है आत्मा का परमात्मा से मिलन। क्या हमारा लक्ष्य इस जन्म-मरण के चक्र से मुक्त होकर बहिश्तों में अवस्थित होना मात्र है या केवल शुष्क ज्ञान प्राप्त कर संसार में अपनी महिमा बढ़ाना या ज्ञान और प्रेम के पंखों के सहारे धनी को प्राप्त करना?

अतः हमें मिली हुई जाग्रत बुध और निज बुध से सभी को सही अर्थ में आत्म-मंथन करने की आवश्यकता है कि हमसे जो वर्षों से भूल हो रही है, उसे तुरंत ही सुधार करने में ही सारे समाज की भलाई है। ब्रह्मसृष्टियों के लिए अखंड परमधाम की तमाम न्यामतों को जाहिर करने वाला और सभी जीवों को अखंड योगमाया में बनने वाली अखंड बहिश्तों के सारे सुख प्रदान करने वाले तारतम को सम्पूर्ण दुनिया में पहुंचाना हमारा कर्तव्य ही नहीं, उत्तरदायित्व भी है।

पुनर्जन्म सिद्धान्त की वैदिक अवधारणा

डॉ. गौरव शर्मा

राजौरी

प्रत्येक जीव एक व्यष्टि आत्मा है। वह प्रतिक्षण अपना शरीर बदलता रहता है- कभी बालक के रूप में, कभी युवा तथा कभी वृद्ध पुरूष के रूप में।

तथापि आत्मा वहीं रहता है उसमें कोई परिवर्तन नहीं होता। यह व्यष्टि आत्मा मृत्यु होने पर अन्ततोगत्वा एक शरीर बदलकर दूसरे शरीर में देहान्तरण कर जाता है। क्योंकि जिसने जन्म लिया है उसकी मृत्यु के पश्चात् पुनर्जन्म भी निश्चित ही है। वैदिक सिद्धान्तों में एक प्रमुख सिद्धांत पुनर्जन्म भी है, जो कि मूल रूप में हमारी भारतीय संस्कृति का एक महत्त्वपूर्ण आधार स्तम्भ है। इसी सिद्धांत के आश्रय से समाज में अनेक प्रकार के क्रिया-व्यवहार सम्पादित किये जाते हैं। समाज का एक बहुत बड़ा भाग जैसे ब्राह्मण वर्ग अथवा सभी गृहस्थ लोग बड़े से बड़ा यज्ञानुष्ठान करते हैं अथवा बड़े से बड़ा परोपकार का कार्य करते हैं, इसका मुख्य आधार यह सिद्धांत ही होता है। अथर्ववेद में भी इस सिद्धान्त का समुचित उल्लेख प्राप्त होता है। अथर्ववेद ऐसे मन्त्रों से परिपूर्ण है जिससे पुनर्जन्म के सिद्धान्त पर किसी न किसी रूप में प्रकाश पड़ता है। कहीं अगले जन्म में विशिष्ट वस्तुयें पाने के लिये प्रार्थना है और कहीं पूर्वजन्म के अच्छे-बुरे कर्मों के अनुसार ही नवीन योनियों में शरीर धारण करने का वर्णन है। कर्मानुसार पशु योनि में जन्म लेने का भी उल्लेख पाया जाता है।

आत्मा तो नित्य है किन्तु कर्म की प्रेरणावश ही पिता द्वारा पुत्र शरीर में प्रविष्ट होता है। वही जीवात्मा प्राण है और वही गर्भ से जलीय तत्त्वों से आवेष्टित पड़ा रहता है। अथर्ववेद के अनुसार जीवात्मा मन में रहता है। वही गर्भ में आता है इस प्रकार वह नये-नये जन्मों को ग्रहण करता रहता है-

प्रजापतिश्चरति गर्ने अन्तरदृश्यमानो बहुधा वि जायते।

जीवात्मा तो अमर है परन्तु शरीर के साथ संबद्ध होकर वह अनेक बार जन्म ग्रहण करता है। चाहे वह मनुष्य का शरीर हो या पशु, पक्षी, कीट, पतंग आदि कोई भी शरीर। वह जीवात्मा स्वंय अर्म्य होते हुये भी मरणशील देह के साथ जन्म ग्रहण करता रहता है। जन्म और मृत्यु साथ-साथ चलते रहते हैं। जिसने जन्म लिया है, वह अवश्य मरेगा। परन्तु मनुष्य का यह भी कर्त्तव्य है कि वह स्वास्थ्य और सदाचार के नियमों का भलीभाँति पालन करते हुये

आयुवर्धक विधि से रहे जिससे उसकी असमय मृत्यु न हो। क्योंकि यह संसार ईश्वर का एक काव्य है और जीवन-मरण इसके अंग हैं। शरीरावसान के बाद जीव के दो मार्ग होते हैं- पहला 'देवयान' अर्थात् जिस मार्ग से देवता जाते हैं या विद्वानों का मार्ग। दूसरा 'पितृयान' जिस मार्ग से पितर जाते हैं अर्थात् सामान्य लोगों का मार्ग। अथर्ववेद के अनुसार मृत्यु के उपरान्त मनुष्य को इस शरीर को छोड़ने के पश्चात् ऊर्ध्व लोक में जाना होता है। उस लोक के लिये एक स्वतन्त्र मार्ग है जिसे 'पितृयाण' कहते हैं। वहाँ पहुँचकर वह यम से मिलता है और उसकी अनुज्ञा से अपने कर्मानुसार तीन गतियों को प्राप्त करता है। एक इस जन्म में उसने जो योग-होमादि शुभ कर्म किये है एवं वापी कूप तडागादि का निर्माण परार्थ किया है, उसके पुण्य के अनुरूप उसे स्वर्गलोक की प्राप्ति होती है। दूसरा पाप-कर्म के कारण सुदूर नरक में चला जाता है तथा तीसरा अपने पाप-पुण्यों के मिश्रित योग से यहाँ पृथ्वी के भोगों का सेवन करता है अर्थात् पुनर्जन्म ग्रहण करता है।

अथर्ववेद में परमात्मा से प्रार्थना करते हुये कहा गया है कि हे जगदीश्वर। हम लोग जैसे पूर्वजन्मों में शुभ गुण धारण करने वाली बुद्धि से उत्तम शरीर और इन्द्रिय सहित थे वैसे ही इस संसार में भी शुभ कर्म करने वाली बुद्धि के साथ मनुष्य देह के कृत्य करने में समर्थ हो। ये सभी शुद्ध बुद्धि के साथ मुझको यथावत् प्राप्त हों जिससे हम लोग इस संसार में मनुष्य जन्म को धारण करके धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को सदा सिद्ध करें और इससे आपकी भक्ति को सदा किया करें जिससे हमको किसी जन्म में कभी दुःख प्राप्त न हो।

ऋग्वेद में वैदिक ऋषि प्रार्थना करता है कि हे परमेश्वर। आपके अनुग्रह से हमें पुनर्जन्म में भी उत्तम नेत्रादि सहित सब इन्द्रियाँ, प्राण, अर्थात् मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार, बल, पराक्रम आदि से युक्त शरीर प्राप्त हो। इस जन्म और पर जन्म में हमें उत्तमोत्तम भोगों की प्राप्ति हो। पुनर्जन्म में सोम अर्थात् औषधियों का रस, हमें उत्तम शरीर देने में अनुकूल रहे तथा परमात्मा कृपा करके हमें सभी जन्मों में सभी प्रकार के दुःखों को निवारण करने वाली पथ्यरूप स्वस्ति प्रदान करते रहें।

पुनर्जन्म में सुख-शान्ति की प्राप्ति हेतु यजुर्वेद में इस प्रकार प्रार्थना की गयी है-

पुनर्मनः पुनरायुर्म आगन् पुनः प्राणः पुनरात्मा म आगन् ।
पुनश्चक्षुः पुनः श्रोत्रं म आगन् ।
वैश्वानरो अदब्धस्तनूपा अग्निर्नः पातु दुरितादवद्यात् ।।

हे सर्वज्ञ परमेश्वर! जब-जब हम जन्म ग्रहण करें, तब-तब हमें शुद्ध मन, पूर्ण आयु, आरोग्यता, उत्तम चक्षु और उत्तम श्रोत्र प्राप्त हो। जो विश्व में विराजमान परमात्मा है, वह सभी जन्मों में हमारे शरीरों का पालन करे। सभी पापों के नाश करने वाले वह हमें बुरे कर्मों और सभी दुःखों से पुनर्जन्म में अलग रखे। इस प्रकार इस प्रार्थना द्वारा भी पुनर्जन्म के सिद्धान्त की पुष्टि होती है।

महर्षि यास्क कहते हैं कि मैंने मृत्यु को प्राप्त होकर फिर जन्म लिया और जन्म लेकर फिर मर गया, इस प्रकार मैंने असंख्य योनियों में निवास किया है। जब मनुष्य को ज्ञान होता है तब वह ठीक-ठीक जान पाता है कि मैंने अनेक बार जन्म-मरण को प्राप्त होकर नाना प्रकार के शरीर धारण किये। अनेक माताओं के स्तन का दूध पीया तथा अनेक माता-पिता और सुहृदों को देखा। मैंने गर्भ में नीचे मुख ऊपर पैर इत्यादि नाना प्रकार की पीड़ाओं से युक्त हो के अनेक

जन्म धारण किये, किन्तु अब इन महादुःखों से तभी छूट पाऊँगा जब परमात्मा में पूर्ण प्रेम और उसकी आज्ञा पालन करूँगा, नहीं तो इस जन्म-मरण रूप दुःखसागर के पार जाना कभी सम्भव नही हो सकता-

मृतश्चाहं पुनर्जातो जातश्चाहं पुनर्मृतः ।
नानायोनिसहस्त्राणि मयोषितानि यानि वै ।।
आवड्मुखः पीडयमानो जन्तुश्चैव समन्वितः ।।

न्यायदर्शन के अनुसार जो उत्पन्न अर्थात् किसी शरीर को धारण करता है, वह मरण अर्थात् शरीर को छोड़कर पुनरुत्पन्न दूसरे शरीर को भी अवश्य प्राप्त होता है। इस प्रकार मृत्यु के उपरान्त पुनर्जन्म लेने को 'प्रेत्य-भाव' कहते हैं। पुनर्जन्म का यह विश्वास, सिद्धान्त रूप से अत्यन्त प्रचीन है और हिन्दू-ज्ञान का समस्त स्त्रोत वैदिक होने के कारण वैदिक वाङ्मय में उसके सूत्र बिखरे हुये है जिससे 'पुनर्जन्म सिद्धान्त' में हमारे विश्वास की पुष्टि होती है।

गीता में श्री कृष्ण अर्जुन को पुनर्जन्म के सम्बन्ध में कहते हैं कि तुम्हारे और मेरे अनेकानेक जन्म हो चुके हैं। मुझे तो उन सभी का स्मरण है किन्तु तुम्हें उनका स्मरण नहीं रह सकता है।

श्वेताश्वेत उपनिषद् के अनुसार संकल्प, स्पर्श, दृष्टि और मोह से तथा भोजनादि के द्वारा प्राणियों के शरीर की वृद्धि और जन्म होते है। यह जीवात्मा भिन्न-भिन्न लोकों में कर्मानुसार मिलने वाले भिन्न-भिन्न शरीरों को कम से बार-बार प्राप्त होता रहता है।

इतने सारे प्रमाणों से यह तो सिद्ध हो ही गया कि पुनर्जन्म होता है। परन्तु कुछ लोग जो यह कहते है कि यदि पुनर्जन्म होता है तो पिछले जन्म का स्मरण क्यों नही होता है? इसके उत्तर में यह कहा जा सकता है कि जीवात्मा अल्पज्ञ होने से भूल जाता है, अतः अपवाद को छोड़ कर अधिकांश स्मरण नहीं रख पाता। कुछ दिन पहले की घटना ही स्मरण नहीं होती। वेदों में भी इस अल्पज्ञता निवारण हेतु प्रार्थनाएं की गयी है- 'तया मामद्यमेधयाग्ने मेधाविनं कुरु स्वाहा।' अर्थात् हे ज्ञान स्वरूप परमेश्वर! मुझ अल्पज्ञ को उत्तम मेधा बुद्धि से युक्त करके आज ही मेधावी बना दीजिए। 'न वि जानामि यदि वेदमस्मि...।' अर्थात् अल्पज्ञता आदि के कारण साधन रूप इन्द्रियों के बिना जीव सिद्ध करने योग्य वस्तु को ग्रहण नहीं कर सकता। एक दृष्टिकोण से देखा जाए तो पूर्व जन्म का स्मरण न होना ही अच्छा है क्योंकि यदि स्मरण होने लगे तो पिछले जन्म में हुई सभी दुःखयुक्त घटनाओं को स्मरण करके मनुष्य और अधिक दुःखी हो जाएगा।

जो व्यक्ति गीता के इस वाक्य 'अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतंकर्म शुभाशुभम्' और योगदर्शन के सूत्र 'ते हलादपरिताप फलाः पुण्यापुण्यहेतुत्वात्' के अनुसार यह समझ लेगा कि किये गये कर्मों का फल अवश्य भोगना ही पड़ेगा और पुण्य कर्म का फल सुख और पाप कर्म का फल दुःख रूप में ही प्राप्त होगा, तो वह कभी भी अधर्म, अन्याय, अत्याचार, अनाचार, भ्रष्टाचार, झूठ, छल, कपट, आदि व्यवहारों में रूचि नहीं दिखायेगा और सदा सत्यनिष्ठ व सत्याचरण करने वाला बन जाएगा, जिससे व्यक्ति के साथ समाज व देश का भी सुधार व कल्याण होगा।

अतः निष्कर्ष रूपेण कहा जा सकता है कि वैदिक ऋषियों ने पुनर्जन्म के जिस सत्य को सूत्रवत् किया। परवर्ती ग्रन्थों में उसकी उसी प्रकार अभिवृद्धि होती आयी है। पुनर्जन्म, सनातन धर्म और कर्म-सिद्धान्त के जिस

मूलाधार पर खड़ा है वैदिक वाङ्मय से आज तक उसकी बराबर पुष्टि होती आयी है। जिससे हम इसे पूर्णतया वैदिक सिद्धांत कह सकते हैं।

सन्दर्भ

१. देहिनोऽस्मिन्यथा देहे कौमारं यौवनं जरा। तथा देहान्तरप्राप्तिर्धीरस्तत्र न मुह्यति।। श्रीमद्भागवतगीता २/१३

२. जातस्य हि ध्रुवो मृत्युर्ध्रुवं जन्म मृतस्य च।। गीता २/२७

३. अथर्ववेद १०/८/१३

४. अन्तर्गर्भश्चरति देवतास्वा भूतो भूतः स उ जायते पुनः। स भूतो भव्यं भविष्यत् पिता पुत्रं प्र विवेशा शचीभिः ।। अथर्ववेद ११/४/२०

५. अपाङ्ग्राडेति स्वधया गृभीतोऽमर्यो मत्यैना सयोनिः ।। अथर्ववेद ९/१०/१६

६. यमो नो गातुं प्रथमो विवेद नैषा गव्यूतिरपभर्तवा उ। यात्रा नः पूर्वे पितरः परेता एना जज्ञानाः पथ्या अनु स्वाः। अथर्ववेद १८/१/५०

७. आयुष्मतामायुष्कृतां प्राणेन जीव मा मृथाः। व्यहं सर्वेण पाप्मना वि यक्ष्मेण समायुषा ।। अथर्ववेद ३/३१/८

८. देवस्य पश्य काव्यं महित्वाद्या ममार सद्यः समान।। अथर्ववेद ९/१०/९

९. अथर्ववेद ८/१०/३

१०. प्रथमेन प्रमारेण त्रेधा विष्वङ् वि गच्छति। अद एकेन गच्छत्यद एकेन गच्छतीहैकेन निषेवते।। अथर्ववेद ११/८/३३

११. पुनर्मेत्विन्द्रियं पुनरात्मा द्रविणं ब्राह्मणं च। पुनरग्नयो धिष्णया यथास्याम कल्पयन्तामिहैव ।। अथर्ववेद ७/६९/१

१२. ऋग्वेद ८/२३/६-७

१३. यजुर्वेद ४/१५

१४. निरुक्त १३/१२-१३

१५. पुनरुत्पत्तिः प्रेत्यभावः। न्याय दर्शन १/१/१९

१६. श्रीमद्भागवतगीता ४/५

१७. संकल्पनस्पर्शनदृष्टिमोहैर्यासाम्बुवृष्ट्वा चात्मविवृद्धिजन्म। कर्मानुगान्यनुक्रमेण देही स्थानेषु रूपाण्यभिसम्प्रपद्यते।। श्वेता९ ५/११

१८. यजुर्वेद ३२.१४

१९. ऋग्वेद १.१६४.३७

२०. अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभं। ब्रहाववैर्वतपुराण१/४४/७४

आधार ग्रन्थ

१. अथर्ववेद का सुबोध भाष्य, डॉ. श्रीपाद दामोदर सातवलेकर, वसन्त श्रीपाद सातवलेकर स्वाध्याय मण्डल, पारडी, १९८५

२. ऋग्वेद का सुबोध भाष्य, डॉ. श्रीपाद दामोदर सातवलेकर, वसन्त श्रीपाद सातवलेकर स्वाध्याय मण्डल, पारडी, १९८५, १९८८
३. न्यायदर्षन, डॉ. उदय कुमठेकर, प्रसाद प्रकाशन, पुणे
४. निरुक्त, आचार्य यास्ककृत, व्याख्याकार आचार्य विश्वेश्वर प्रकाशक आचार्य विश्वेश्वर ज्ञानमण्डल लिमिटेड वाराणसी, २००२
५. यजुर्वेद का सुबोध भाष्य, डॉ. श्रीपाद दामोदर सातवलेकर, वसन्त श्रीपाद सातवलेकर स्वाध्याय मण्डल, पारडी, १९८५
६. श्वेताश्वतर उपनिषद्, महेशानन्द गिरि, श्री दक्षिणमूर्ति मठ, मिश्रपोखरा, वाराणसी
७. श्रीमद्भागवतगीता, चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस वाराणसी, विद्याविलास प्रेस, वाराणसी

(साभार : International Journal of Research and Analytical Reviews, January-March 2019

सूचना

प्राणाधार सुन्दरसाथ जी! आप सभी को यह बताते हुए हमें अपार हर्ष का अनुभव हो रहा है कि गर्मियों की छुट्टियों को ध्यान में रखते हुई दिनांक 24 मई 2024 से 30 मई 2024 तक साप्ताहिक बाल–युवा–प्रचारक प्रशिक्षण शिविर का आयोजन किया जा रहा है। अतः आप सभी से प्रार्थना है कि अपना तथा अपने बच्चों का धार्मिक ज्ञान, आध्यात्मिक संस्कार व सेवा भाव विकसित करना चाहते हैं तो इस कार्यक्रम में पधारकर अवश्य लाभ लें।

कार्यक्रम के मुख्य विषय–

1. *सामान्य धर्मज्ञान*
2. *निजानन्द दर्शन (वाणी व बीतक पर आधारित)*
3. *योगाभ्यास व चितवनि*
4. *संगीत*
5. *प्रवचन की कला*

आदि रहेंगे।

निवेदक – श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ परिवार

प्रार्थना क्यों करें ? कैसे करें ?

डॉ. रमेश के. अरोड़ा

जयपुर

Tears are prayers too; they travel to God when you can't find the words- ~ Rumi

हम बचपन से ही प्रार्थना करते आ रहे है -'हे प्रभु! ज्ञान हमको दीजिए... शीघ्र सारे दुर्गुणों को दूर हमसे कीजिए।' वस्तुतः प्रार्थना हमारे जीवन का अंग है। इसका कोई एक विधान नहीं है... कोई एक नियम नहीं है। यह केवल वाणी से नहीं होती... मस्तिष्क से नहीं होती... संस्कृत या अंग्रेजी में नहीं होती। यह दिल की भाषा है... यह मौन की भाषा है। यह केवल आंसुओं से भी हो सकती है। यह कहीं भी की जा सकती है... यह कैसे भी की जा सकती है। यह हृदय से की जा सकती है और यही सबसे महत्वपूर्ण है।

प्रार्थना हमारे दिल की इच्छाओं, विचारों, भावनाओं और आकांक्षाओं द्वारा रचित गीतों की तरह हैं और भगवान हमारी प्रार्थनाओं को न केवल सुनने का आनंद लेते हैं बल्कि लगातार सरल लेकिन महत्वपूर्ण चमत्कारों के माध्यम से उत्तर देते हैं। याद रखें, व्यस्त जीवन प्रार्थना को कठिन बना देता है, लेकिन प्रार्थना व्यस्त जीवन को आसान बना देती है

प्रातः उठते के पश्चात् सर्वप्रथम हम परमात्मा से कहें - 'हे ईश्वर! तूने जो हमें आज का दिन मुझे प्रदान किया है, उसके लिए तेरा बहुत-बहुत धन्यवाद। तूने हमें इतना सब कुछ दिया है - यह शरीर दिया, स्वास्थ्य दिया, अच्छे माता-पिता दिये, भाई-बहन दिये, सगे-सम्बन्धी दिये, मित्र दिये, शिक्षा दी, धन-सम्पति दी, यश दिया। यह सब कुछ तेरा ही है। तेरा बहुत आभार...शुक्रिया।'

भूटान विश्व का एकमात्र ऐसा देश है जो जीवन के स्तर को सकल राष्ट्रीय खुशी (जीएनएच) से नापता है न कि सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) से। वहां की सरकार का कहना है कि इससे भौतिक और मानसिक रूप से ठीक होने के बीच संतुलन स्थापित किया जाता है। यही कारण है कि वहां के लोग अपने जीवन से बहुत खुश हैं।

जहां तक मेरा मत है इसका एक अन्य कारण भी है। कुछ वर्ष पूर्व अपनी भूटान यात्रा के दौरान मैंने महसूस किया कि वहां के लोगों की प्रसन्नता का मुख्य कारण उनका निस्वार्थ भाव से प्रार्थना करना है। वे जब भी ईश्वर से कुछ

प्रार्थना करते हैं तो केवल अपने लिए नहीं बल्कि सबके लिए। अपने लिए कुछ मांगते हैं तो साथ ही साथ सबके लिए। और व्यक्ति की यही निस्वार्थ भावना उसे चरम खुशी प्रदान करती है। अतः हम भी जब परमात्मा से कुछ मांगे तो न केवल अपने लिए वरन् समस्त मानवता के लिए। मनुष्य का विराट रूप ऐसे ही प्रकट होता है।

इसके अतिरिक्त हम अपनी प्रार्थना में प्रायः ईश्वर से कहते हैं - 'सुख सम्पत्ति घर आवे... कष्ट मिटे तन का।' इसमें कोई आपत्ति नहीं है। लेकिन इसके साथ ही, जैसाकि गांधी जी कहते थे, हमें परमात्मा से सबके लिए सन्मति की प्रार्थना भी करनी चाहिए- 'सबको सन्मति दे भगवान।'

अपनी प्रार्थना में हमें परमात्मा से कहना चाहिए कि वे अपने गुणों - सहनशीलता, संतोष, करुणा, अनुकंपा - में से कुछ आपको दे। वे आपके हृदय को अपना मंदिर बना दें ताकि उनका प्रतिनिधि बनकर आप मानव कल्याण के लिए कुछ कार्य कर सकें। आपकी भक्ति और परमात्मा की शक्ति (कृपा) का ऐसा सामंजस्य हो जिससे आपमें दूसरों की सेवा का सामर्थ्य पैदा हो सकें। और यही मानव जीवन की सार्थकता है।

यह कैसा संसार है, जिसमें मैं लाखों जन्मों से भटक रहा हूँ?

यह सम्पूर्ण जड़ जगत प्रकृति में होने वाली विकृति से बना है। इसका निमित्त कारण ब्रह्म है और उपादान कारण प्रकृति है। पंचभूतों द्वारा प्रगट होने वाले ५ विषयों (शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध) के भोग की तृष्णा में प्राणी ८४ लाख योनियों में भटकता रहता है। जब तक चैतन्य (जीव) में प्रकृति के सुखों के भोग की वासना रहेगी, तब तक वह इसे पार करके न तो ब्रह्म–साक्षात्कार कर पायेगा और न ही अखण्ड मुक्ति का सुख प्राप्त कर पायेगा।

विनम्र निवेदन

धाम धनी के लाडले सुन्दरसाथ जी! वर्तमान समय में श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ सरसावा में शिक्षण, साहित्यिक एवं निर्माण कार्य तेजी से चल रहा है। जिन सुन्दरसाथ ने इन कार्यों के लिए अपनी सेवाएं लिखवायी है या स्वतः उनके मन में सेवा करने की इच्छा है, कृपया वे इन खातों में धनराशि भेजने का कष्ट करें। इस बात का ध्यान रखा जाय कि जिस सेवा की धनराशि भेजी जा रही है, मात्र उसी खाते की C.B.S. A/C संख्या में भेजें।

प्रणाम जी

1. खाताधारक का नाम – श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ ट्रस्ट खाता संख्या – 3290805513	
2. खाताधारक का नाम – श्री प्राणनाथ ज्ञान केन्द्र, पन्ना खाता संख्या – 3759122888,	
सेण्ट्रल बैंक ऑफ इण्डिया, पता : शाखा–सरसावा, सहारनपुर, उ.प्र. – 247232 MICR Code - 241016005 IFSC Code CBIN0282158	**सेण्ट्रल बैंक ऑफ इण्डिया,** पता : शाखा – पन्ना IFSC Code CBIN0282158

सामान्य खाता संख्या
1335000100111916
पंजाब नेशनल बैंक
सलेमपुर (सहारनपुर) उ.प्र.
RTGS/NEFT IFS
CODE - PUNB0133500

साहित्य खाता संख्या
1335000100118751
पंजाब नेशनल बैंक
सलेमपुर (सहारनपुर) उ.प्र.
RTGS/NEFT IFS
CODE - PUNB0133500

भवन निर्माण खाता संख्या
34971188767
भारतीय स्टैट बैंक
(11439) सरसावा, सहारनपुर
उत्तरप्रदेश, पिन- 247232
IFS CODE- SBIN0011439

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ
सरसावा से प्रकाशित साहित्य की सूची

क्र. सं.	ग्रन्थ का नाम	मूल्य
01	श्री कुलजम स्वरूप	550
02	श्री बीतक साहिब टीका	400
03	बीतक चर्चा	350
04	रास ग्रन्थ टीका	180
05	प्रकाश ग्रन्थ टीका	400
06	खटरूती ग्रन्थ टीका	80
07	कलश ग्रन्थ टीका	225
08	सनन्ध ग्रन्थ टीका	300
09	किरन्तन ग्रन्थ टीका	300
10	खुलासा ग्रन्थ टीका	250
11	खिलवत ग्रन्थ टीका	250
12	परिक्रमा ग्रन्थ टीका	275
13	सागर ग्रन्थ टीका	230
14	सिनगार ग्रन्थ टीका	400
15	सिन्धी ग्रन्थ टीका	100
16	मारफत सागर ग्रन्थ टीका	180
17	कयामतनामा ग्रन्थ टीका	160
18	किरन्तन (अंग्रेजी में) ग्रन्थ टीका	350
19	किरन्तन (नेपाली में) ग्रन्थ टीका	300
20	परमधाम पट्दर्शन	650
21	परमधाम पट्दर्शन (गत्तेवाली)	700
22	पुराण संहिता	200
23	विद्वद्दमनी	200
24	कलश टीका (नेपाली में)	150
25	श्री मुखवाणी संगीत (राग सहित)	180
26	श्री मुखवाणी संगीत (छोटी)	70
27	खाद्य परिशीलन	250
28	निजधाम दर्शन	150
29	रूपान्तरण (युगलदास जी–बड़ी वृत्त)	150
30	आर्ष ज्योति	120
31	जागो ओर जगाओ	100
32	तारतम पीयूषम्	70
33	तारतम के निर्झर	70
34	ध्यान की पुष्पांजलि	70
35	सत्यांजलि	80
36	मूल स्वरूप की ओर	80
37	चितवनी महिमा	80
38	हमारी रहनी	50
39	प्रेम का चाँद	80
40	दोपहर का सूरज	80
41	अमृत बिन्दु	20
42	नित्य पाठ (बड़ी)	30
43	मांसाहार (विनाश का पर्याय)	80
44	ब्रह्मवाणी चर्चा	65
45	हमारी शाश्वत सम्पदा	60
46	निजानन्द योग (बड़ी)	70
47	झूठ ही झूठ	60
48	कड़वे सच	50
49	ज्ञान मन्थन	50
50	विराट–नक्शा (कैलेण्डर रूप में)	50
51	संस्कार पद्धति	70
52	गागर में सागर	50
53	प्राणनाथ महिमा (नई)	40

क्र. सं.	ग्रन्थ का नाम	मूल्य
54	बीतक से शिक्षा	40
55	ब्रह्माण्ड रहस्य	60
56	स्वास्थ्य के प्रहरी	40
57	तमस् के पार (बड़ी)	40
58	तमस् के पार (पंजाबी में)	40
59	सेवा पूजा	30
60	ज्ञान मंजूषा	30
61	यथार्थ दीपिका	30
62	भागवत यथार्थम्	30
63	निजानन्द चित्र कथा	30
64	तमस् के पार (छोटी)	20
65	निजानन्द योग (छोटी)	20
66	श्री प्राणनाथ महिमा (पुरानी)	40
67	संसार से परमधाम की ओर	20
68	सत्य को बाटो (नेपाली में)	15
69	बोध मंजरी (हिन्दी)	15
70	बोध मंजरी (उड़िया)	15
71	चितवनी मार्ग दर्शन	10
72	चितवनी	10
73	नित्य पाठ	10
74	सागर के मोती	10
75	अनमोल मोती	10
76	शाश्वत सत्य की ओर	10
77	ये स्वर्णिम पल	10
78	प्रश्न माला	5
79	मीर जी शेख जी का बयान	20
80	सोवं कयामतनामा (तीसरा कयामतनामा)	90
81	बुलन्द मुकदमा	40
82	हयातुनबी	40
83	मुख्तारे–हिन्द	20
84	अफलातूनी इलम	20
85	शब–ए–मेयराज	15
86	Food For Thought	250
87	Mystic Universe	80
88	Descent of the Absolute Divine	80
89	Get Introduced to Nijanand School	120
90	Darkness to Brightness	60
91	Chess of Mystic Spiritual Knowledge	25
92	Pearls of Spiritual Wisdom	30
93	Nijanand Meditation निजानन्द योग अंग्रेजी (बड़ी)	60
94	Nijanand Meditation निजानन्द योग अंग्रेजी (छोटी)	10
95	Supreme Truth God	30
96	वर्णाश्रम	70
97	जागनी सुधा (भाग–1)	80
98	जागनी सुधा (भाग–2)	80
99	जागनी सुधा (भाग–3)	90
100	गीतादर्शनम्	60
101	सौन्दर्य–सिन्धु (भाग–1)	70
102	सौन्दर्य–सिन्धु (भाग–2)	80
103	जातिवाद	30

बुक पोस्ट

RNI:UPHIN/2016/46009
RNP/SHN/18/2022-24

सेवा में

प्रकाशन कार्यालय :
श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ
सरसावा, नकुड़ रोड़
जिला सहारनपुर-247232 (उ.प्र.)
मोबाइल : 7088120381